कक्षा
10

क्षितिज

अनिवार्य हिंदी

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

क्षितिज
कक्षा 10

क्षितिज

अनिवार्य हिंदी

कक्षा 10 के लिए हिंदी की पाठ्यपुस्तक

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अनिवार्य हिंदी

कक्षा 10 के लिए हिंदी की पाठ्यपुस्तक

संयोजक :— **डॉ. शशिप्रकाश चौधरी**
जानकी देवी बजाज राजकीय कन्या विज्ञान महाविद्यालय, कोटा

लेखकगण :—

1. **डॉ. गजेन्द्र मोहन**
   व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, नसीराबाद

2. **श्री राजेश कुमार गोयल**
   व्याख्याता, रा.उ.मा.वि. दुर्गापुरा, जयपुर

3. **श्री श्याम सिंह**
   वरिष्ठ अध्यापक, रा.उ.मा.वि. देवातड़ा, भोपालगढ़, जोधपुर

पाठ्यक्रम समिति

अनिवार्य हिंदी

कक्षा 10 के लिए हिंदी की पाठ्यपुस्तक

संयोजक :– डॉ. आशीष सिसोदिया, सहायक आचार्य
हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

सदस्य :–

1. डॉ. दीपिका विजयवर्गीय, व्याख्याता
   राजकीय स्नातकोत्तर महिला कॉलेज, चौमूं जिला–जयपुर

2. डॉ. नवीन नन्दवाना, सहायक आचार्य हिन्दी विभाग
   मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

3. श्री संजय कुमार शर्मा
   डाइट , हनुमानगढ़

4. श्री रमाशंकर शर्मा, व्याख्याता
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, धौलपुर

5. श्री अशोक कुमार शर्मा, वरिष्ठ अध्यापक
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, रलावता, अजमेर

6. श्री रमाशंकर शर्मा, वरिष्ठ अध्यापक
   राजकीय वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय, कुण्डगेट, सावर, अजमेर

दो शब्द

विद्यार्थी के लिए पाठ्यपुस्तक क्रमबद्ध अध्ययन, पुष्टीकरण, समीक्षा और आगामी अध्ययन का आधार होती है। विषय-वस्तु और शिक्षण-विधि की दृष्टि से विद्यालयी पाठ्यपुस्तक का स्तर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है। पाठ्यपुस्तकों को कभी जड़ या महिमामण्डित करने वाली नहीं बनने दी जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तक आज भी शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया का एक अनिवार्य उपकरण बनी हुई है, जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

पिछले कुछ वर्षों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पाठ्यक्रम में राजस्थान की भाषागत एवं सांस्कृतिक स्थितियों के प्रतिनिधित्व का अभाव महसूस किया जा रहा था, इसे दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार द्वारा कक्षा-9 से 12 के विद्यार्थियों के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा अपना पाठ्यक्रम लागू करने का निर्णय लिया गया है। इसी के अनुरूप बोर्ड द्वारा शिक्षण सत्र 2016-17 से कक्षा-9 व 11 तथा सत्र 2017-18 से कक्षा-10 व 12 की पाठ्यपुस्तकें बोर्ड के निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर ही तैयार कराई गई हैं। आशा है कि ये पुस्तकें विद्यार्थियों में मौलिक सोच, चिंतन एवं अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करेंगी।

प्रो. बी.एल. चौधरी
अध्यक्ष
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

आमुख

साहित्य मनुष्य की जय यात्रा का सबसे विश्वसनीय पथबन्धु है। इस प्रतिज्ञा का पालन दसवीं कक्षा की इस अनिवार्य हिन्दी पुस्तक के पाठ संयोजन के प्रसंग में पूरी निष्ठा के साथ स्वयं ही हो गया है। साहित्य की बुनियादी शर्त संवेदना का संवर्धन है। इस पुस्तक के तमाम पाठों से गुजरते हुए भारत के सर्वसमावेशी समाज की संवेदना एवं सामाजिकता से आपकी मुलाकात होगी। सदियों में फैली हिन्दी भाषा की कारयित्री प्रतिभा का उजास इस संकलन में समेटने की कोशिश की गयी है। यों भी, साहित्य के गुणसूत्र में सबका हित समाहित है। बहुजन हिताय की ध्वनि सभी पाठों की आत्मा से प्रसारित हो रही है।

किशोर वय के विद्यार्थियों के लिए यंत्रों के संजाल का आभासी संसार चारों तरफ फैला पड़ा है। इस समूह को चुपचाप मूक दर्शक एवं श्रोता समूह में बदल दिया गया है। इन रचनाओं से किशोर पाठकों का मनोजगत सांस्कृतिक परिवेश के प्रति आकर्षित होगा तथा मननशील नागरिक की दिशा में उसके चित्त का रूपान्तरण होगा।

भारत का जन समाज शताब्दियों से लोकतांत्रिक मन में प्रशिक्षित है। इसका सुन्दरतम साक्ष्य सदियों के साहित्य में सुरक्षित है। विश्व समुदाय भारत की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहा है। कहना नहीं होगा कि इन पाठों के संदेशों से गुजर कर विद्यार्थियों का विश्व बोध अपनी माटी और अपने देशज विचारों के प्रति सदय होगा। पूर्वाग्रह से मुक्त होकर वह समाज के आखिरी सोपान के व्यक्ति के प्रति सहिष्णु होगा। स्त्रियों को समानधर्मा समझेगा। दिव्यांग जनों के प्रति व्याकुल होगा।

इस पुस्तक की रूपरेखा अठारह पाठों में समाहित है। नौ पद्य पाठ और नौ गद्य पाठ का समतोल कायम रखा गया है। कवियों को काल क्रमानुसार सजाया गया है। गद्य में इस टेक का निर्वहन संभव नहीं हो पाया है। गद्य खण्ड में यह प्रयास रहा है कि नवलेखन की विविध बहुरंगी विधाओं से आपका रचनात्मक परिचय एवं लगाव स्थापित हो जाए। शब्द और स्मृति के इस आयोजन की आप सैर करें। इसी अपेक्षा एवं आकांक्षा के साथ .... **शिवास्ते पन्थानः सन्तु।**

— संयोजक

डॉ. शशिप्रकाश चौधरी

हिंदी पाठ्यक्रम – कक्षा– 10

समय– 3.15

विषय कोड–01
पूर्णांक – 80

अधिगम क्षेत्र	अंक
अपठित बोध	8
रचना	12
व्यावहारिक व्याकरण	12
पाठ्य पुस्तक क्षितिज	48
योग	80

खण्ड – 1

अपठित बोध – 8 अंक
(क) अपठित गद्यांश – 4 अंक
(ख) अपठित गद्यांश – 4 अंक

खण्ड – 2

रचना – 12 अंक
निबंध लेखन – 8 अंक
पत्र लेखन (कार्यालय पत्र, व्यावसायिक पत्र) – 4 अंक

खण्ड – 3

व्यवहारिक व्याकरण – 12 अंक

- क्रिया, विशेषण – 2 अंक
- कारक, काल, वाच्य – 3 अंक
- समास – 2 अंक
- वाक्य शुद्धि – 2 अंक
- मुहावरे – 2 अंक
- लोकोक्तियाँ – 1 अंक

खण्ड – 4

4. पाठ्य पुस्तक क्षितिज (48 अंक)
   (क) 1 व्याख्या गद्य भाग से (विकल्प सहित) – 06 अंक
   (ख) 1 व्याख्या गद्य भाग से (विकल्प सहित) – 06 अंक
   (ग) 2 निबंधात्मक प्रश्न (1 गद्य एवं 1 पद्य भाग से विकल्प सहित) 2X6 = 12 अंक
   (घ) 6 लघूत्तरात्मक प्रशन (3 गद्य एवं 3 पद्य भाग से) 6X2 = 12 अंक
   (ड.) 4 अतिलघूत्तरात्मक प्रशन(4 गद्य एवं 4 पद्य भाग से) $4X1\frac{1}{2}$ = 6 अंक
   (च) किन्हीं दो रचनाकारों का परिचय (कवि एवं लेखक) 2X3= 6 अंक

हिंदी कक्षा– 10 (अनिवार्य)

हिंदी की पाठ्यपुस्तक के लिए संभावित रचनाकार एवं रचनाओं की सूची

काव्य खण्ड

1. सूरदास के पद जो कि क्षितिज भाग–2 कक्षा 10 में संगृहीत है।
2. तुलसीदास द्वारा रचितक रामचरित मानस का कोइ अंश । जैसे– लक्ष्मण– परशुराम संवाद जो कि क्षितिज भाग– 2 कक्षा 10 में संगृहित है।
3. रीतिकालीन कवि देव की कविता जो कि क्षितिज भाग – 2 कक्षा 10 में संगृहित है।
4. सेनापति के कोई चार पद, ऋतुवर्णन से संबंधित।

5 राजस्थानी के कोई चार पद, ऋतुवर्णन से संबंधित।

6 जयशंकर प्रसाद की कविता आत्मकथ्य, जो कि क्षितिज भाग–2 कक्षा 10 में संगृहित है।

8. नागार्जुन की कोई दो कविताएँ।
9. ऋतुराज की कविता कन्यादान, जो कि क्षितिज भाग– 2 कक्षा 10 में संगृहीत है।

गद्य खण्ड

10. भारतेन्दु का कोई एक निबंध
11. प्रेमचन्द की कहानी ईदगाह
12. महावीर प्रसाद द्विवेदी – स्त्री शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खण्डन

13 लक्ष्मीनारायण रंगा – अमर शहीद (एकांकी)

14 राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय, मोहनराकेश आदि द्वारा रचित कोई एक यात्रा वृतांत

15 दिनकर का लेख – ईर्ष्या तू न गई मेरे मन से।

16. धर्मवीर भारती, अज्ञेय, महादेवी वर्मा आदि रचनाकारों में से किसी एक का संस्मरण
17. राजस्थान के लोक संत
18. महाराव शेखा/अमर सिंह राठौड ।
19. सड़क सुरक्षा शिक्षा– (4 अंक)

विषय-क्रम

काव्य खंड

1. **सूरदास** 1
   बूझत स्याम कौन तू गोरी
   मधुकर स्याम हमारे चोर।
   संदेसनि मधुबन कूप भरे।
   ऊधौ मन माने की बात।

2. **तुलसीदास** 4
   लक्ष्मण–परशुराम संवाद

3. **सेनापति** 9
   ऋतु वर्णन

4. **देव** 13
   पाँयनि नूपुर...
   धार में धाय...
   झहरि झहरि झीनी...

5. **कृपाराम खिड़िया** 16
   राजिया रा सोरठा

6. **जयशंकर प्रसाद** 20
   प्रभो!

7. **सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'** 23
   अभी न होगा मेरा अन्त
   मातृ–वन्दना

8. **नागार्जुन** 27
   कल और आज
   उषा की लाली

9. **ऋतुराज** 31
   कन्यादान

गद्य खंड

10. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 34
एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न

11. मुंशी प्रेमचन्द 39
ईदगाह

12. महावीर प्रसाद द्विवेदी 53
स्त्री शिक्षा के विरोधी कुर्तकों का खंडन

13. लक्ष्मीनारायण रंगा 61
अमर शहीद

14. मोहन राकेश 74
आखिरी चट्टान

15. रामधारी सिंह 'दिनकर' 82
ईर्ष्या, तू न गई मेरे मन से

16. महादेवी वर्मा 88
गौरा

17. रामबक्ष 96
लोक संत दादू दयाल

18. लोक संत पीपा 101
(संकलित)

19. सड़क सुरक्षा शिक्षा 106

काव्य खंड

1

सूरदास

(जन्म : संवत् 1540 - निधन : 1620)

कवि-परिचय -

कृष्ण भक्त कवि सूरदास का जन्म संवत् 1540 में हुआ था। इनका जन्म स्थान आगरा और मथुरा के बीच स्थित 'रूनुकता' ग्राम माना जाता है। कुछ विद्वान दिल्ली के निकट 'सीही' ग्राम को इनकी जन्मस्थली मानते हैं। इनके पिता का नाम रामदास बताया जाता है। वार्त्ता–साहित्य और भक्तमाल के आधार पर ये सारस्वत ब्राह्मण कहे गए किन्तु 'साहित्य लहरी' में एक पद है जिससे ये पृथ्वीराज के अमात्य तथा राजकवि चन्दवरदाई के वंशज ब्रह्मभट्ट मालूम होते हैं। इस पद से बहुत सी बातें ज्ञात होती हैं। इसी पद के आधार पर कहा जाता है कि ये नेत्रहीन होने के कारण एक अन्धकूप में गिर पड़े थे। छह दिन वहाँ पड़े रहने के बाद भगवान श्री कृष्ण ने इन्हें दर्शन दिए और सनेत्र कर दिया। इस पर सूरदास ने कहा –''प्रभु जिन नेत्रों से आपके दर्शन हुए, अब उनसे मैं सांसारिक पापों को नहीं देखना चाहता।'' उनके निवेदन से नेत्र सदा के लिए बन्द हो गए लेकिन उन्हें प्रज्ञा–चक्षु प्राप्त हो गए।

सूरदास जन्म से अन्धे थे – यह विवादास्पद है। इस संबंध में अधिकांश विद्वानों का मत है कि वे जीवन के अंतिम समय में अंधे हुए थे, क्योंकि इसका प्रमाण हमें इनके पदों से मिल जाता है :–

''या माया झूठी की लालच दुहूँ दृग अंध भयौ।।''

आचार्य वल्लभ ने अपने सिद्धान्तों में सूरदास को दीक्षित किया और उसी समय से उनकी दास्य भाव की भक्ति सख्य भाव में परिणत हो गई। अपने गुरू वल्लभाचार्य की आज्ञानुसार इन्होंने ईश्वर की कथा को भाषा में वर्णन करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया। सूरदास की उपलब्ध रचनाएँ तीन हैं – सूरसागर, साहित्य लहरी और सूर सारावली। सूरसागर इनका प्रामाणिक, अत्युत्तम एवं श्रेष्ठ काव्य ग्रन्थ है जो इनकी कीर्ति को अक्षय रखने के लिए पर्याप्त है। सूरदास ने ब्रज भाषा का प्रयोग किया है। इनके पूर्ववर्ती किसी भी कवि की भाषा में काव्य छटा न तो इतनी साहित्यिक है और न इतनी सौन्दर्यपूर्ण।

पाठ-परिचय -

प्रस्तावित पहले पद में कृष्ण और राधिका के प्रथम मिलन का वर्णन है। अपरिचय की दीवार कृष्ण के पहल से समाप्त होती है। राधिका बहुत चतुराई से कृष्ण की खूबियों एवं खामियों को व्याज–स्तुति में कह जाती है। अन्ततः कृष्ण, राधिका को संग खेलने के लिए आमंत्रित करते हैं। शेष तीन पदों में उद्धव और गोपिकाओं के संवाद हैं। इसे भ्रमरगीत के रूप में जाना जाता है। भ्रमरगीत हिन्दी साहित्य में अनुपम है। उद्धव निर्गुण ब्रह्म के प्रवक्ता के रूप में गोकुल आते हैं। किन्तु कृष्ण के सम्मोहन में डूबी गोपियों के विचार सुनकर उद्धव जी निरुत्तर हो जाते हैं। गोपिकाओं के उपालंभ विदग्धता और करुणा से भरे हैं। गोपियों के व्यंग्य

बाणों से उद्धव का हृदय छलनी हो जाता है और वे स्वयं कृष्णमय हो जाते हैं। आस्था के समक्ष उद्धव के सिद्धान्त फीके पड़ जाते हैं। प्रस्तावित समस्त पद गेय हैं।

पद

(1)

बूझत स्याम कौन तू गोरी।
कहाँ रहति काकी है बेटी, देखी नहीं कबहूँ ब्रज–खोरी।।
काहे को हम ब्रज–तन आवतिं, खेलत रहतिं आपनी पोरी।
सुनत रहतिं स्रवननि नंद ढोटा, करत फिरत माखन दधि चोरी।।
तुम्हरो कहा चोरि हम लैहें, खेलन चलो संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि, बातनि भुरई राधिका भोरी।।

(2)

मधुकर स्याम हमारे चोर।
मन हरि लियौ तनक चितवनि मैं, चपल नैन की कोर।।
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कैं जोर।
गए छँड़ाइ तोरि सब बंधन, दै गए हँसनि अँकोर।।
चौंकि परी जागत निसि बीती, दूत मिल्यौ इक भौंर।
सूरदास प्रभु सरबस लूटयौ, नागर नवल किसोर।।

(3)

संदेसनि मधुबन कूप भरे।
अपने तो पठवत नहीं मोहन, हमरे फिरि न फिरे।।
जिते पथिक पठए मधुबन कौं, बहुरि न सोध करे।
कै वै स्याम सिखाइ प्रमोधे, कै कहुँ बीच मरे।।
कागद गरे मेघ, मसि खूटी, सर दव लागि जरे।।
सेवक सूर लिखन कौ आंधौ, पलक कपाट अरे।।

(3)

ऊधौ मन माने की बात।
दाख छुहारा छांड़ि अमृत फल, बिषकीरा बिष खात।।
ज्यों चकोर कों देई कपूर कोउ, तजि अंगार अघात।
मधुप करत घर फोरि काठ मैं, बंधत कमल के पात।।
ज्यौं पतंग हित जानि आपनो, दीपक सौं लपटात।
सूरदास जाकौ मन जासौ, सोई ताहि सुहात।।

कठिन शब्दार्थ

खोरी	–	गली,	**पौरी**	–	दहलीज	**स्रवननि**	–	कानों से
ढोटा	–	पुत्र	**भुरइ**	–	बहकाना	**तनक**	–	जरा सी,
अँकोर	–	रिश्वत	**भौंर**	–	भ्रमर, भँवरा	**सरबस**	–	सर्वस्व
मधुबन	–	मथुरा	**सोध**	–	खोज	**प्रमोधे**	–	वश में करना
मसि	–	स्याही	**सर दव**	–	सरकंडों के जंगल	**दाख**	–	किशमिश
अघात	–	प्रसन्न	**सुहात**	–	रूचिकर			

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 'दूत मिल्यौ एक भौंर' से आशय है –
   (क) भँवरा (ख) राधा (ग) गोपिकाएँ (घ) उद्धव
2. 'नागर नवल किसोर' विशेषण किसके लिए आया है :
   (क) उद्धव (ख) गोप (ग) कृष्ण (घ) श्यामा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कृष्ण 'गोरी' संबोधन किसके लिए कर रहे हैं?
4. सारे बंधन तोड़ कर कौन कहाँ चला गया है?
5. गोपियों को भ्रमर के रूप में कौन–सा दूत मिला?
6. श्याम ने किसको सिखाकर वश में कर लिया?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. कृष्ण ने भोली राधा को बातों में कैसे उलझा लिया?
8. कृष्ण ने एक झलक में ही गोपियों का मन कैसे वश में कर लिया?
9. मथुरा के कुएँ संदेसों से कैसे भर गए?
10. 'तजि अंगार अघात' से क्या तात्पर्य है?

निबंधात्मक –

11. कृष्ण एवं राधा की प्रथम भेंट को अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए?
12. गोपियाँ कृष्ण को चोर क्यों सिद्ध कर रही हैं? विस्तारपूर्वक लिखिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) संदेसनि मधुबन कूप भरे .... सेवक सूर लिखन कौ आंधौ, पलक कपाट अरे।।
    (ख) ऊधौ मन माने की बात .... सूरदास जाकौ मन जासौ, सोई ताहि सुहात।।

2
तुलसीदास

(जन्म : संवत् 1589 / मृत्यु : संवत् 1680)

जीवन परिचय –

तुलसीदास का जन्म उत्तरप्रदेश के बाँदा जिले के राजापुर गाँव में संवत् 1589 के लगभग माना जाता है। इनके पिता का नाम आत्माराम था जो एक सरयूपारीण ब्राह्मण थे। इनकी माता का नाम हुलसी था। कहा जाता है कि तुलसीदास अभुक्त मूल नक्षत्र में पैदा हुए थे तथा जन्म लेते ही इनकी अवस्था पाँच वर्ष के बालक के समान थी। मुँह में दाँत भी निकले हुए थे। भय की आशंका के चलते माता–पिता ने इन्हें त्याग दिया तथा मुनिया नामक दासी को दे दिया, जिसने इनका पालन–पोषण किया। इनका बाल्यकाल कष्टपूर्ण बीता। कवितावली में ये लिखते हैं:–

'मातु पिता जग जाय तज्यो, विधिहू न लिख्यो कछु भाल भलाई'

इनके गुरू का नाम नरहरिदास बताया जाता है। इनकी पत्नी रत्नावली विदुषी थी किन्तु किसी कारणवश वैवाहिक जीवन अधिक समय तक न चल सका। इन्होंने गृह त्याग कर दिया तथा घूमते–घूमते अयोध्या पहुँच गए। वहीं पर संवत् 1631 में इन्होंने 'रामचरितमानस' की रचना प्रारम्भ की। बाद में ये काशी आकर रहने लगे। जीवन के अंतिम दिनों में पीड़ा शांति के लिए इन्होंने हनुमान की स्तुति की जो 'हनुमान बाहुक' नाम से प्रसिद्ध है। इनकी मृत्यु के संबंध में निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है :–

''संवत सोलह सौ असी, असी गंग के तीर
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर।''

इन्होंने राम के अनन्य भक्त के रूप में दास्य भाव अपनाते हुए अनेक काव्यग्रन्थों की रचना की, जिनमें से निम्नलिखित प्राप्त हैं:– रामचरितमानस, विनयपत्रिका, दोहावली, गीतावली, कवितावली, रामाज्ञाप्रश्न, बरवैरामायण, जानकीमंगल, पार्वतीमंगल, रामललानहछू, वैराग्य संदीपनी तथा श्रीकृष्ण गीतावली।

तुलसी आदर्शवादी कवि थे। इन्होंने आदर्श चरित्रों का सृजन कर हमें अपने दैनिक जीवन में उनके अनुकरण का संदेश दिया है। ये अवधी और ब्रज भाषा दोनों के पंडित थे। दोनों भाषाओं का शुद्ध और परिमार्जित रूप इन्होंने अपनाया।

पाठ-परिचय –

लक्ष्मण–परशुराम संवाद रामचरितमानस के बालकाण्ड से उद्धृत है। धनुर्यज्ञ के पश्चात् मुनि परशुराम शिव–धनुष भंग का समाचार पाकर क्रोध में तमतमाते हुए वहाँ आते हैं किन्तु राम की विनयशीलता और विश्वामित्र के समझाने पर राम के शक्ति–परीक्षण के बाद उनका क्रोध शांत होता है। परन्तु इस बीच लक्ष्मण और परशुराम के बीच व्यंग्योक्तियों से

युक्त जो संवाद हुआ उस प्रसंग को यहाँ प्रस्तुत किया गया है। परशुराम के क्रोध से भरे वचनों का उत्तर लक्ष्मण व्यंग्य वचनों से देते हैं। लक्ष्मण जहाँ विवाद वत्सल हैं, वहीं श्रीराम नीतिज्ञ एवं सौजन्य के प्रतिमान के रूप में प्रकट होते हैं। विश्वामित्र सन्तुलन बिन्दु हैं। वे चरमक्रोध की दशा में परशुराम के आवेश को प्रशमित करते हैं। परशुराम का क्रोध, भय से अधिक हास्य का आलंबन बन गया है।

लक्ष्मण-परशुराम संवाद

नाथ संभुधनु भंजनिहारा। होइहि केउ एक दास तुम्हारा।।
आयसु काह कहिअ किन मोही। सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही।।
सेवकु सो जो करै सेवकाई। अरि करनी करि करिअ लराई।।
सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा। सहसबाहु सम सो रिपु मोरा।।
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा। न त मारे जैहहिं सब राजा।।
सुनि मुनि बचन लखन मुसुकाने। बोले परसुधरहि अवमाने।।
बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं। कबहूँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं।।
एहि धनु पर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू।।

रे नृप बालक काल बस, बोलत तोहि न सँभार।
धनुही सम तिपुरारि धनु, बिदित सकल संसार।।

लखन कहा हसि हमरे जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना।।
का छति लाभु जून धनु तोरें। देखा राम नयन के भोरें।।
छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोसू।।
बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा।।
बालकु बोलि बधउँ नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही।।
बाल ब्रह्मचारी अति कोही। बिस्व बिदित छत्रियकुल द्रोही।।
भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही।।
सहसबाहु भुज छेदनिहारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा।।

मातु पितहि जनि सोचबस, करसि महीसकिसोर।
गर्भन्ह के अर्भक दलन, परसु मोर अति घोर।

बिहसि लखनु बोले मृदुबानी। अहो मुनीसु महा भटमानी।।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू।।
इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि डरि जाहीं।।

देखि कुठारू सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना।।
भृगुसुत समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी।।
सुर महिसुर हरिजन अरू गाई। हमरे कुल इन्ह पर न सुराई।।
बधें पापु अपकीरति हारें। मारतहूँ पा परिअ तुम्हारें।।
कोटि कुलिस सम बचनु तुम्हारा। ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा।।

जो बिलोकि अनुचित कहेउँ, छमहु महामुनि धीर।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि बोले गिरा गभीर।।

कौसिक सुनहु मंद यहु बालकु। कुटिल काल बस निजकुल घालकु।।
भानु बंस राकेस कलंकू। निपट निरंकुस अबुध असंकू।।
काल कवलु होइहि छन माहीं। कहऊँ पुकारि खोरि मोहि नाहीं।।
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा। कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा।।
लखन कहेउ मुनि सुजसु तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनै पारा।।
अपने मुँह तुम्ह आपनि करनी। बार अनेक भाँति बहु बरनी।।
नहिं संतोषु त पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू।।
बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा। गारी देत न पावहु सोभा।।

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रतापु।।

तुम्ह तौ कालु हाँक जनु लावा। बार–बार मोहि लागि बोलावा।।
सुनत लखन के बचन कठोरा। परसु सुधारि धरेऊ कर घोरा।।
अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू। कटुबादी बालकु बधजोगू।।
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा। अब यहु मरनिहार भा साँचा।।
कौसिक कहा छमिअ अपराधू। बाल दोष गुन गनहिं न साधू।।
खर कुठार मैं अकरून कोही। आगें अपराधी गुरूद्रोही।।
उतर देत छोड़उँ बिनु मारें। केवल कौसिक सील तुम्हारें।।
न त एहि काटि कुठार कठोरें। गुरहि उरिन होतेउँ श्रम थोरें।।

गाधिसूनु कह ह्रदयँ हँसि, मुनिहि हरिअरइ सूझ।
अयमय खाँड न ऊखमय, अजहुँ न बूझ अबूझ।।

कहेउ लखन मुनि सील तुम्हारा। को नहिं जान बिदित संसारा।।
माता पितहि उरिन भए नीकें। गुरू रिनु रहा सोचु बड़ जीकें।।
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा। दिन चलि गए ब्याज बड़ बाढ़ा।।
अब आनिअ ब्यवहरिआ बोली। तुरत देउँ मैं थैली खोली।।
सुनि कटु बचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा।।
भृगुबर परसु देखावहु मोही। बिप्र बिचारि बचउँ नृपद्रोही।।

मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहि के बाढ़े।।
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सयनहिं लखनु नेवारे।।

लखन उतर आहुति सरिस भृगुबर कोपु कृसानु।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुल भानु।।

कठिन शब्दार्थ

भंजनिहारा	–	तोड़ने वाला	**रिसाइ**	–	गुस्सा करना
रिपु	–	दुश्मन	**बिलगाउ**	–	अलग होना
अवमाने	–	अपमान करना	**लरिकाई**	–	बचपन
परसु	–	फरसा	**कोही**	–	क्रोधी
महिदेव	–	ब्राह्मण	**बिलोक**	–	देखकर
अर्भक	–	बालक	**महाभट**	–	महान योद्धा
मही	–	पृथ्वी	**कुठारू**	–	कुल्हाड़ी
कुम्हड़बतिया	–	छोटा कच्चा फल	**तरजनी**	–	अँगूठे के पास वाली अँगुली
कुलिस	–	कठोर	**सरोष**	–	गुस्से से
कौसिक	–	विश्वामित्र	**भानुबंस**	–	सूर्यवंश
निरंकुस	–	मनमानी करने वाला	**असंकू**	–	शंकारहित
घालकू	–	नाश करने वाला	**कालकवलु**	–	मृत
अबुधु	–	नासमझ	**खोरि**	–	दोष
हटकह	–	मना करने पर	**अछोभा**	–	शांत
बधजोगू	–	मार देने योग्य	**अकरुन**	–	जिसमें करुणा न हो
गाधिसूनु	–	गाधि के पुत्र अर्थात् विश्वामित्र			
अयमय	–	लोहे का बना हुआ	**नेवारे**	–	मना करना
ऊखमय	–	गन्ने से बना हुआ	**कृसानु**	–	अग्नि

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 'भृगुसुत से तात्पर्य है –

   (क) परशुराम (ख) विश्वामित्र (ग) लक्ष्मण (घ) राम

2. 'रघुकुल भानु' संज्ञा किस पात्र के लिए आया है?

   (क) राम (ख) लक्ष्मण (ग) विश्वामित्र (घ) परशुराम

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. शिव धनुष भंग होने पर कौन कुपित हुआ?
4. प्रसंग में 'गाधिसूनु' किसके लिए प्रयोग किया गया है?
5. परशुराम लक्ष्मण को मंदबुद्धि क्यों कह रहे हैं?
6. जनक दरबार में बैठी सभा 'हाय हाय' क्यों करने लगी?

लघूत्तरात्मक –

7. शिव धनुष भंग होने पर परशुराम क्यों कुपित हो रहे थे?
8. शिव का धनुष कैसे टूट गया था?
9. "इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं" पंक्ति से लक्ष्मण की कौन–सी विशेषता का पता चलता है?
10. 'लक्ष्मण–परशुराम संवाद प्रसंग' के आधार पर परशुराम के चरित्र की किन्हीं दो विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?

निबंधात्मक –

11. 'लक्ष्मण–परशुराम संवाद' का कथासार अपने शब्दों में लिखिए?
12. 'लक्ष्मण–परशुराम संवाद' की भाषा की विशेषताएँ बताइए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

    (क) सेवकु सो जो करै सेवकाई.............................. न त मारे जैहहिं सब राजा।।

    (ख) बिहसि लखनु बोले मृदुबानी..............................जे तरजनी देखि डरि जाहीं।।

    (ग) सूर समर करनी करहिं .... कायर कथहिं प्रतापु।।

    (घ) कहेउ लखन मुनि सील तुम्हारा .... तुरत देउँ मैं थैली खोली।।

3
सेनापति
(जन्म : संवत् 1616)

जीवन परिचय –

सेनापति का जन्म दीक्षित गोत्रीय ब्राह्मण परिवार में विक्रम संवत् 1616 में हुआ। उनके पिता का नाम गंगाधर और पितामह का नाम परशुराम दीक्षित था। उनके विद्यागुरू हीरामणि दीक्षित थे। वे बहुत ही आत्मविश्वासी थे। अपना परिचय देते हुए एक स्थान पर इन्होंने कहा है –

''सेनापति सोई, सीतापति के प्रसाद जाकी,
सब कवि कान दै, सुनत कविताई है।''

ये रीतिकाल के महान एवं भावप्रवण कवि माने जाते हैं। कुछ लोगों का कथन है कि सेनापति इनका उपनाम या उपाधि है किन्तु इनका मूल नाम किसी को भी ज्ञात नहीं है। परन्तु इस बात में कतई संदेह नहीं है कि काव्य–कला और मौलिकता की दृष्टि से युगीन कवियों में वे सेनापति की भाँति थे। सेनापति रामभक्त कवि थे। श्लेष अलंकार के प्रयोग में वे सिद्धहस्त थे। उन्होंने किसी कवि का अनुसरण नहीं किया। ये रीतिबद्ध कवियों की श्रेणी में आते हैं। इनकी दो रचनाएँ प्रसिद्ध हैंः– 'काव्यकल्पद्रुम' तथा 'कवित्त रत्नाकर'। काव्यकल्पद्रुम, जो अप्राप्य है इनका काव्य शास्त्रीय ग्रन्थ रहा होगा। इनके कवित्तों में अलंकार और रसध्वनि के उदाहरण एक से बढ़कर एक मिलते हैं। इन्होंने अलंकार संप्रदाय का अनुसरण किया।

सेनापति ब्रजभाषा के कवि हैं। साधारण शब्द भी उनके हाथ में आते ही सैनिक की भाँति सशक्त बन जाते हैं। वे फारसी शब्दों का प्रयोग भी करते थे। उनकी रचनाओं में प्रसाद और ओज गुण की प्रधानता है। परिमार्जित भाषा का प्रयोग और भावगांभीर्य उनके काव्य की विशेषता है।

पाठ–परिचय –

यहाँ प्रस्तुत कविता सेनापति के ऋतुवर्णन का प्रौढ़ और प्रांजल नमूना है। इनमें पूरी निपुणता से ऋतु के उपादनों एवं उसके लक्षणों का उपयोग कवि ने किया है। वसन्त का वैभव पूरी छटा के साथ पंक्तियों में पिरोया गया है। कवि ने ऋतु वसन्त का सूक्ष्मतापूर्वक मानवीकरण किया है। पूरा परिदृश्य राजा के आगमन काल के वस्तुओं एवं भावनाओं से बुना गया है। रंगीन उपवन सुगन्धमय है। कोकिल चारण की भूमिका में पदगान कर रहा है। शोभा के सुखमय उपकरण सेना के कवायद की छवि उत्पन्न कर रहा है; क्योंकि राजा एकाकी गमन नहीं करता है। इसी तरह भीषण ग्रीष्म के बाद झुलसी हुई प्रकृति पर जब वर्षा की बूँदें पड़ती हैं तो धरती नयनाभिराम एवं सुखमय हो जाती है। मानसून का आगमन इस कृषि प्रधान

देश के लिए एक उत्सव की तरह होता है। कवि ने डूब कर बरसात के ऋतु चक्र को आँखों के आगे साकार कर दिया है। शीत ऋतु की आक्रामकता को सेनापति के आचरण में कवि ने वर्णित किया है। इस हमले ने पूरी प्रकृति को पराजित कर दिया है। बर्फीली हवा की चुभन तीर के समान घातक हैं। सूरज का तेवर निस्तेज पड़ गया है। अलाव की आग को घेर कर जन समुदाय ठिठुर रहे हैं। देशज समाज पर ऋतुओं के प्रभाव का इतना जीवन्त वर्णन ही सेनापति को कालजयी कवि बनाता है।

ऋतु वर्णन

बरन बरन तरू फूले उपबन बन,
सोई चतुरंग संग दल लहियतु है।
बंदी जिमि बोलत बिरद बीर कोकिल हैं,
गुंजत मधुप गान गुन गहियतु हैं।
आवै आस–पास पुहूपन की सुबास सोई,
सोने के सुगंध माँझ सने रहियतु हैं।
सोभा कौं समाज, सेनापति सुख–साज, आज,
आवत बसंत रितुराज कहियतु है।।
देखैं छिति अंबर जलै है चारि ओर छोर,
तिन तरबर सब ही कौं रूप हर्‌यौ है।
महाझर लागै जोति भादव की होति चलै,
जलद पवन तन सेक मानों पर्‌यौ है।
दारून तरनि तरैं नदी सुख पावैं सब,
सीरी घन छाँह चाहिबौई चित्त धर्‌यौ है।
देखौ चतुराई सेनापति कविताई की जू,
ग्रीषम विषम बरसा की सम कर्‌यौ है।।
दामिनी दमक, सुरचाप की चमक, स्याम
घटा की झमक अति घोर घनघोर तैं।
कोकिला, कलापी कल कूजत हैं जित–तित,
सीकर ते सीतल समीर की झकोर तैं।
सेनापति आवन कह्‌यो है मनभावन सु
लाग्यौ तरसावन विरह–जुर जोर तैं।
आयौ सखी सावन, मदन सरसावन,
लग्यौ है बरसावन सलिल चहुँ ओर तैं।।

सीत कौ प्रबल सेनापति कोपि चढ्यौ दल,
निबल अनल, गयौ सूरि सियराइ कै।
हिम के समीर, तेई बरसैं विषम तीर,
रहीहै गरम भौन कोनन मैं जाइ कै।
धूम नैन बहैं, लोग आगि पर गिरे रहैं,
हिए सौं लगाई रहैं नैंक सुलगाई कै।
मानो भीत जानि महा सीत तैं पसारि पानि,
छतियाँ की छाँह राख्यौ पाउक छिपाइ कै।।

कठिन शब्दार्थ

बरन बरन	–	विभिन्न रंगों के
चतुरंग	–	चारों अंगों वाली सेना जिसमें हाथी, घोड़े, रथ एवं पैदल सैनिक शामिल हों, पुहूपन–फूल, माँझ–मध्य में
छिति	–	पृथ्वी,
झर	–	(1) ताप, (2) झड़ी
भादव	–	(1) जंगल की आग की तरह, (2) भादों का महीना
तरनि	–	(1) सूर्य, (2) नौका
दामिनी	–	बिजली
कलापी	–	मोर
सीकर	–	जल की बूँदें
विरह जुर	–	विरह का बुखार
मदन	–	कामदेव
निबल	–	शक्तिहीन
सूरि	–	सूर्य
सियराइ	–	ठण्डा
कोनन	–	कोने में
धूम	–	धुँआ
पानि	–	हाथ
पाउक	–	आग

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. कवि ने किस ऋतु को 'रितुराज' कहा है?
   (क) हेमन्त (ख) शिशिर (ग) ग्रीष्म (घ) वसन्त

2. सुरचाप का अर्थ है –
   (क) इन्द्रधनुष (ख) देवता (ग) अर्धवृत्त (घ) घटा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कविता में बंदीजन किसे कहा गया है?
4. प्रिय ने किस ऋतु में वापस आने के लिए प्रेयसी को कहा था?
5. ऋतुवर्णन में ऋतुराज किसे कहा गया है?
6. 'निबल अनल' से क्या तात्पर्य है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. 'चतुरंग दल' से सेनापति का क्या तात्पर्य है?
8. सावन के माह में कामदेव नायिका को परेशान कैसे कर रहा है?
9. ग्रीष्म ऋतु में बादल और हवा की क्या स्थिति हो गई है?

निबंधात्मक प्रश्न –

10. सेनापति का ऋतुवर्णन हिन्दी साहित्य में अनूठा क्यों है?
11. पठित काव्यांश के आधार पर शीत ऋतु का वर्णन कीजिए।
12. वसंत ऋतु के सौन्दर्य पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) बरन बरन तरू फूले उपबन बन ....आवत बसंत रितुराज कहियतु है।।
    (ख) सीत कौ प्रबल सेनापति कोपि चढ्यौ दल............................ छतियाँ की छाँह राख्यौ पाउक छिपाइ कै।।

4
देव

(जन्म : संवत् 1730 वि. – निधन : 1824 वि.)

जीवन परिचय –

रीतिकालीन काव्य परम्परा में विशिष्ट स्थान रखने वाले कवि देव का जन्म विक्रम संवत् 1730 वि. में हुआ। इनके ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि ये इटावा के रहने वाले थे। इस संबंध में एक उक्ति प्रचलित है –

''द्यौस–रिया कवि देव को नगर इटावो वास''

इनके पिता का नाम कुछ विद्वान बिहारीलाल दुबे मानते हैं। इनके वंशज वर्तमान में इटावा और कुसमरा में रहते हैं।

देव की रचनाओं की संख्या 52 कही जाती है किन्तु इनकी प्रमुख और प्राप्त रचनाओं में भावविलास, भवानीविलास, कुशलविलास, रसविलास, काव्य रसायन, देवचरित्र, अष्टयाम, सुजानविनोद, प्रेमतरंग आदि हैं।

देव ने भी केशव की भाँति कवि और आचार्य कर्म का निर्वाह किया था। स्वभाव से रसिक होने के कारण उनके काव्य में श्रृंगार रस का उच्छल प्रवाह बहता है। यह श्रृंगारिकता छिछली नहीं अपितु उसमें विशेष गंभीरता विद्यमान है। वे वैसे तो रसवादी आचार्य थे परन्तु अलंकारों के स्वाभाविक प्रयोग के प्रति उनका आग्रह था। देव ने साहित्यिक ब्रजभाषा को अपनाया था परन्तु उसमें संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी तथा उत्तर भारत की अन्य बोलियों के शब्दों का स्वतंत्रता से प्रयोग मिलता है।

इस प्रकार कवि देव काव्य सृष्टि और आचार्य दृष्टि के कारण ऐसे महाकवि हैं, जिन्होंने तत्कालीन सामाजिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों में हिन्दी साहित्य को अमूल्य ग्रन्थ रत्न प्रदान किए।

पाठ परिचय –

यहाँ निर्धारित कविता में देव ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण का गुणकथन किया है। साँवरिया श्रीकृष्ण के पाँवों से घुँघरू के मधुर स्वर झंकृत हो रहे हैं। वे पीत वसन में सुहावने लग रहे हैं। माथे पर मोर मुकुट है। नयन चंचल हैं। मंद हँसी चेहरे पर शोभायमान है। कृष्ण के लोक प्रचलित स्वरूप को कवि ने अभिधा में समग्रता से उपस्थित कर दिया है। देव को पेचीले मजमून की बुनावट में निपुणता हासिल थी। दूसरे पद्य में उन्होंने मौलिकतापूर्वक कृष्ण के जादुई सूरत में गोपिकाओं के विवश समर्पण का वर्णन किया है। तीसरा पद्य स्मृति एवं स्वप्न कविता का संगम है। नायिका का स्वप्निल संसार उसके जागते ही खो जाता है। स्वप्न में सुखद मिलन है और जागरण में जुदाई। यह विडम्बना ही कविता की मौलिकता एवं खूबसूरती है।

देव

पाँयनि नूपुर मंजु बजैं, कटि–किंकिनि में धुनि की मधुराई
साँवरे अंग लसै पट पीत, हिये हुलसै बन–माल सुहाई।।
माथे किरीट, बड़े दृग चंचल, मंद हँसी मुख चंद जुन्हाई।
जै जग–मंदिर–दीपक सुंदर, श्री ब्रज–दूलह देव–सहाई।।

धार में धाय धँसी निरधार ह्वै, जाय फँसी, उकसीं न अबेरी।
री अंगराय गिरीं गहरी, गहि, फेरे फिरीं औ घिरी नहीं घेरी।।
देव कछू अपनो बस ना, रस–लालच लाल चितै भयीं चेरी।
बेगि ही बूड़ि गयी पखियाँ, अखियाँ मधु की मखियाँ भयीं मेरी।।

झहरि झहरि झीनी बूँद हैं परति मानो,
घहरि घहरि घटा घेरी है गगन में।
आनि कह्यो स्याम मो सों, चलौ झूलिबे को आजु
फूली ना समानी, भई ऐसी हौं मगन मैं।।
चाहति उठयोई, उड़ि गई सो निगोड़ी नींद,
सोय गए भाग मेरे जागि वा जगन में।
आँखि खोलि देखौं तो, घन हैं ना घनस्याम
वेई छायी बूँदें मेरे, आँसु ह्वै दृगन में।।

कठिन शब्दार्थ

नूपुर	–	घुँघरू,
कटि	–	कमर,
लसै	–	सुशोभित
किरीट	–	मुकुट
दृग	–	नेत्र
जुन्हाई	–	चाँदनी

चेरी	–	दासी
बेगि	–	तेजी से
पखियाँ	–	पंख

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. कवि देव का जन्म स्थान है –
   (क) इटावा (ख) सौरों (ग) रूनुकता (घ) अज्ञात
2. 'घहरी–घहरी घटा' में कौन–सा शब्दालंकार है?
   (क) रूपक (ख) उपमा (ग) अनुप्रास (घ) यमक

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. 'श्री ब्रजदूलह' की संज्ञा किसे प्रदान की गई है?
4. रस की लालची और दासी कौन हो गई है ?
5. श्याम ने किसे झूला झूलने के लिए आमंत्रित किया?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

6. नेत्रों को मधुमक्खी के समान क्यों बताया गया है?
7. नायिका के भाग क्यों सो गये?
8. 'जै जग मंदिर दीपक सुंदर' से कवि का क्या तात्पर्य है?

निबंधात्मक प्रश्न –

9. काव्यांश के आधार पर कृष्ण के सौन्दर्य का वर्णन कीजिए।
10. पठितांश के आधार पर देव की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
11. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) पाँयनि नूपुर मंजु बजैं, कटि–किंकिनि में धुनि की मधुराई .... जै जग–मंदिर–दीपक सुंदर, श्री ब्रज–दूलह देव–सहाई।।
    (ख) चाहति उठयोई, उड़ि गई सो निगोड़ी नींद .... वेई छायी बूँदैं मेरे, आँसु ह्वै दृगन में।।

5
कृपाराम खिड़िया

जीवन परिचय –

कवि कृपाराम खिड़िया शाखा के चारण थे। इनके पिता का नाम जगराम जी था जो खराड़ी गाँव (वर्तमान पाली जिले में) के निवासी थे। सीकर नरेश देवीसिंह एवं उनके पुत्र राव राजा लक्ष्मण सिंह ने इनकी कवि प्रतिभा एवं विद्वत्ता से प्रभावित हो इन्हें क्रमशः महराजपुरा एवं लछमणपुरा गाँव की जागीर प्रदान की थी।

कृपाराम खिड़िया का रचनाकाल संवत् 1864 (वि.सं.) के आसपास माना जाता है। इनकी रचनाओं में 'राजिया रा सोरठा' (काव्य), चालकनेसी (नाटक) तथा एक अलंकार ग्रन्थ के नाम गिनाये जाते हैं। इनमें से 'राजिया रा सोरठा' ही वर्तमान में उपलब्ध है।

'राजिया रा सोरठा' (ग्रन्थ) कवि ने अपने सेवक राजाराम (राजिया) को संबोधित कर लिखा है। राजाराम (राजिया) कवि का विश्वासपात्र एवं सेवाभावी सेवक था। राजाराम निस्संतान था। इसलिए वह बहुत उदास रहता था कि मरणोपरान्त कोई उसका नाम लेवा भी नहीं बचेगा। तब कवि ने उसे आश्वस्त किया कि वह अपनी कविता द्वारा उसे अमर बना देंगे कि सारी दुनिया उसका नाम याद रखेगी। तब कवि ने राजिया को संबोधित कर नीति के सोरठे रचने शुरू किये। इसमें लगभग 140 सोरठे मिलते हैं।

'राजिया रा सोरठा' राजस्थानी भाषा में संबोधन नीति काव्य की प्रथम रचना मानी जाती है। इसमें डिंगल भाषा का प्रयोग हुआ है। सोरठा छंद है तथा वैण सगाई मुख्य अलंकार है। इनकी सहजता, सरलता एवं सरसता तथा प्रसादगुणयुक्तता के कारण 'राजिया रा सोरठा' लोक समाज में बहुत प्रसिद्ध है।

पाठ परिचय –

संकलित अंश में कवि ने हिम्मत एवं पराक्रम का महत्त्व, सद् संगति का लाभ, आपदा से पूर्व प्रबन्धन के महत्त्व को स्पष्ट किया है। इनमें मानव जीवन में वाणी को महत्वपूर्ण बताते हुए सोच–समझकर एवं मधुर वचन बोलने का उपदेश दिया गया है। कवि के अनुसार एक आदर्श समाज में गुणों की पूजा होनी चाहिए। इन सोरठों में कवि की विद्वत्ता, बहुज्ञता एवं अनुभव की व्यापकता प्रकट होती है।

राजिया रा सोरठा

(1) गुण अवगुण जिण गांव, सुणै न कोई सांभलै।
उण नगरी विच नांव, रोही आछी राजिया।।

(2) कारज सरै न कोय, बल प्राक्रम हिम्मत बिनां।
हलकार्‌यां की होय, रंगा स्याळां राजिया।।

(3) मिळे सींह वन मांह, किण मिरगां मृगपत कियौ।
जोरावर अति जांह, रहै उरध गत राजिया।।

(4) आछा जुध अणपार, धार खगां सनमुख धसै।
भोगै हुय भरतार, रसा जिके नर राजिया।।

(5) इणही सूं अवदात, कहणी सोच विचार कर।
बे मौसर री बात, रूड़ी लगै न राजिया।।

(6) पहली कियां उपाव, दव दुसमण आमय दटै।
प्रचँड हुआं विसवाव, रोभा घालै राजिया।।

(7) हीमत कीमत होय, बिना हीमत कीमत नहीं।
करै न आदर कोय, रद कागद ज्यूँ राजिया।।

(8) उपजावै अनुराग, कोयल मन हरखत करै।
कडवौ लागै काग, रसना रा गुण राजिया।।

(9) दूध नीर मिळ दोय, हेक जिसी आक्रित हुवै।
करै न न्यारौ कोय, राजहंस बिना राजिया।।

(10) मलियागिर मंझार, हर को तर चंनण हुवै।
संगत लियै सुधार, रूंखा ही नै राजिया।।

(11) पाटा पीड़ उपाव, तन लागां तरवारिया।
वहै जीभ रा घाव, रती न ओखद राजिया।।

(12) मूसा नै मंजार, हित कर बैठा हेकण।
सह जाणै संसार, रस नह रहसी राजिया।।

(13) खळ गुळ अण खूंताय, एक भाव कर आदरै।
ते नगरी हुंताय, रोही आछी राजिया।।

(14) घण घण साबळ घाय, नह फूटै पाहड़ निवड़।
जड़ कोमळ भिद जाय, राय पड़ै जद राजिया।।

(15) पय मीठा कर पाक, जो इमरत सींचीजिये।
उर कड़वाई आक, रंच न मुकै राजिया।।

कठिन शब्दार्थ

रोही	–	निर्जन वन	**आछी**	–	अच्छी
हलकार्‌या	–	ललकारना	**स्याळां**	–	श्रृंगालों को
मिरगा	–	मृग, पशु	**जोरावर**	–	बल, पराक्रम
जुध	–	युद्ध	**खगां**	–	तलवार
रसा	–	पृथ्वी	**अवदात**	–	हितकारी, उज्ज्वल
बे मौसर	–	बिना अवसर	**रूड़ी**	–	अच्छी
उपाव	–	उपाय	**दव**	–	जंगल
आमय	–	रोग	**रोभा**	–	कष्ट
घालै	–	देता है	**रद**	–	रद्‌दी
हरखत	–	हर्ष, प्रसन्नता	**रसना**	–	जबान, वाणी
इमरत	–	अमृत	**रंच**	–	जरा–सा भी
मुकै	–	कम होना	**हेक**	–	एक
आक्रित	–	आकृति	**न्यारौ**	–	अलग
मंझार	–	मध्य में	**तर**	–	वृक्ष
चंनण	–	चंदन वृक्ष	**मूसा**	–	चूहा
मंजार	–	बिल्ली	**रस**	–	अपनत्व, मित्रता
खळ	–	खल, भूसी	**गुळ**	–	गुड़
घण	–	घने	**साबळ**	–	हथौड़ा
धाय	–	प्रहार	**भिद**	–	भेदना
राय	–	दरार	**उरध गत**	–	उर्ध्वगति

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 'राजिया' का मूल नाम था –
   (क) राजा (ख) राजाराम (ग) रजिया (घ) रामदेव
2. दूध एवं जल की मिलावट को कौन अलग करता है?
   (क) कौआ (ख) कोयल (ग) तोता (घ) राजहंस

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कवि के अनुसार किसके अभाव में कोई भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता है ?
4. दूध एवं नीर (जल) को कौन अलग–अलग कर सकता है?
5. कवि के अनुसार किन–किन का उपाय पहले ही कर लेना चाहिए।
6. कौनसी जगह चंदन के वृक्ष बहुतायत में पाये जाते हैं?
7. किस के घाव कभी नहीं भरते हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. संकलित अंश के अनुसार किस नगर में नहीं रहना चाहिए?
9. 'अस्वभाविक मित्रता के घातक परिणाम होते हैं' संकलित अंश के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
10. 'जन्मजात प्रवृत्तियों में बदलाव असंभव है' संकलित अंश के आधार पर स्पष्ट कीजिए?

निबंधात्मक प्रश्न –

11. संकलित अंश के आधार पर हिम्मत एवं पराक्रम के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
12. संकलित अंश के आधार पर वाणी के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
   (क) दूध नीर मिळ दोय, हेक जिसी आक्रित हुवै।
   करै न न्यारौ कोय, राजहंस बिना राजिया।।
   (ख) घण घण साबळ घाय, नह फूटै पाहड़ निवड़।
   जड़ कोमळ भिद जाय, राय पड़ै जद राजिया।।

6
जयशंकर प्रसाद
(जन्म : 1889 ई. / मृत्यु : 1937 ई.)

जीवन परिचय –

छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी नगरी में सन् 1889 में हुआ था। इनके पिता बाबू देवीप्रसाद शिक्षा प्रेमी थे, जिन्हें लोग सुँघनी साहु कहकर बुलाते थे। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा का प्रबंध पहले घर पर ही हुआ। बाद में इन्हें क्वीन्स कॉलेज में अध्ययन हेतु भेजा गया। अल्प आयु में ही अपनी मेधा से इन्होंने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बचपन से ही इनकी रूचि साहित्य की ओर थी। 'इन्दु' नामक मासिक पत्रिका का इन्होंने सम्पादन किया। साहित्य जगत् में इन्हें वहीं से पहचान मिली। काव्य रचना के साथ–साथ नाटक, उपन्यास एवं कहानी विधा में भी इन्होंने अपना कौशल दिखाया। इनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं :–

काव्य	–	आँसू, लहर, झरना, कामायनी, प्रेमपथिक, चित्राधार
नाटक	–	ध्रुवस्वामिनी, विशाखा, राज्यश्री, अजातशत्रु, स्कन्दगुप्त, चंद्रगुप्त, एक घूँट
उपन्यास	–	कंकाल, तितली, इरावती (अपूर्ण)
कहानी	–	आकाशदीप, प्रतिध्वनि, पुरस्कार, गुण्डा, आँधी, छाया, इन्द्रजाल
निबन्ध	–	काव्यकला तथा अन्य निबन्ध

प्रसाद जी की प्रतिभा बहुमुखी है, किन्तु साहित्य के क्षेत्र में कवि एवं नाटककार के रूप में इनकी ख्याति विशेष है। छायावादी कवियों में ये अग्रगण्य हैं। 'कामायनी' इनका अन्यतम काव्य ग्रन्थ है, जिसकी तुलना संसार के श्रेष्ठ काव्यों से की जा सकती है। 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' का जीता जागता रूप प्रसाद के काव्य में मिलता है। मानव सौन्दर्य के साथ–साथ इन्होंने प्रकृति सौन्दर्य का सजीव एवं मौलिक वर्णन किया है। इन्होंने ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली दोनों का प्रयोग किया है। इनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ है। 15 नवम्बर सन् 1937 ई. को हिन्दी साहित्य का यह अमर कवि सदा के लिए संसार से विदा हो गया।

पाठ परिचय –

जयशंकर प्रसाद की 'प्रभो' कविता उनके स्फुट कविताओं के संग्रह 'कानन कुसुम' से ली गई है। ईश्वर की स्तुति करते हुए कवि ने उसकी सर्वव्यापकता, सौन्दर्य और शक्तिमत्ता का गुणगान किया है। कवि को प्रकृति के प्रत्येक उपादान में ईश्वर का अनन्त प्रसार दृष्टिगत होता है। चन्द्र किरणें ईश्वरीय प्रकाश को व्यक्त करती हैं। सागर की उत्ताल तरंगें उसकी

स्तुति करती हैं। चन्द्रिका उसकी मुस्कान को तथा नदियों का कल–कल निनाद उसके आह्लाद को व्यक्त करता है। वस्तुतः प्रकृति के सौन्दर्य और प्रेम से युक्त भव्य रूप को प्रकाशित करने वाला ईश्वर ही है। ईश्वर की कृपा होने पर ही मनुष्य के समस्त मनोरथ पूर्ण होते हैं। खड़ी बोली हिन्दी में रचित यह कविता प्रसाद जी की भावाभिव्यक्ति का सुंदर उदाहरण है। तत्सममयी और गंभीर भाषा ने कविता को अद्भुत अभिव्यंजना सौष्ठव से युक्त कर दिया है। लयात्मकता, सरसता और मौलिकता की दृष्टि से भी यह कविता उत्तम कोटि की है।

प्रभो!

विमल इन्दु की विशाल किरणें,
प्रकाश तेरा बता रही हैं।
अनादि तेरी अनन्त माया,
जगत को लीला दिखा रही हैं।

प्रसार तेरी दया का कितना,
ये देखना है तो देखे सागर।
तेरी प्रशंसा का राग प्यारे,
तरंग मालाएँ गा रही हैं।

तुम्हारा स्मित हो जिसे निरखना,
वो देख सकता है चंद्रिका को।
तुम्हारे हँसने की धुन में नदियाँ,
निनाद करती ही जा रही हैं।

विशाल मंदिर की यामिनी में,
जिसे देखना हो दीपमाला।
तो तारकागण की ज्योति उसका,
पता अनूठा बता रही हैं।

प्रभो! प्रेममय प्रकाश तुम हो,
प्रकृति–पद्मिनी के अंशुमाली।
असीम उपवन के तुम हो माली
धरा बराबर बता रही है।

जो तेरी होवे दया दयानिधि,
तो पूर्ण होता ही है मनोरथ।
सभी ये कहते पुकार करके,
यही तो आशा दिला रही है।

कठिन शब्दार्थ

विमल	—	स्वच्छ	**इन्दु**	—	चन्द्रमा
अनादि	—	जिसके प्रारम्भ का पता न चले	**स्मित**	—	मुस्कान
निनाद	—	ध्वनि	**यामिनी**	—	रात्रि
पद्मिनी	—	कमलिनी	**अंशुमाली**	—	सूर्य
मनोरथ	—	इच्छा			

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. जयशंकर प्रसाद का जन्म हुआ –
   (क) 1880 ई. (ख) 1889 ई. (ग) 1888 ई. (घ) 1890 ई.
2. जयशंकर प्रसाद द्वारा सम्पादित पत्रिका का नाम है –
   (क) प्रभा (ख) माधुरी (ग) सरस्वती (घ) इन्दु

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. जयशंकर प्रसाद के किन्हीं तीन काव्य संग्रहों के नाम बताइए?
4. ईश्वर की प्रशंसा का राग कौन गा रहा है?
5. मनुष्य के मनोरथ कब पूर्ण होते हैं?
6. अंशुमाली का क्या अर्थ है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. 'प्रकृति–पद्मिनी के अंशुमाली' से कवि का क्या तात्पर्य है?
8. कवि ने ईश्वर को अनादि क्यों कहा है?
9. यामिनी में अनूठा पता कौन बता रही है?
10. दयानिधि से क्या तात्पर्य है?

निबंधात्मक –

11. 'प्रभो' कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए?
12. 'प्रभो' कविता की भाषा की विशेषताएँ बताइए?
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए:–
    (क) विशाल मंदिर की यामिनी में.........................पता अनूठा बता रही हैं।
    (ख) प्रभो! प्रेममय प्रकाश तुम हो........................... असीम उपवन के तुम हो माली।

7
सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

(जन्म : 1896 ई. / मृत्यु : 1961 ई.)

परिचय –

छायावाद के प्रमुख कवियों में 'निराला' उपनाम से प्रसिद्ध सूर्यकान्त त्रिपाठी का जन्म वसंत पंचमी को बंगाल के मेदिनीपुर जिले में हुआ था। उनकी औपचारिक शिक्षा हाईस्कूल तक हुई। तदुपरान्त हिन्दी, संस्कृत तथा बांग्ला का अध्ययन स्वयं किया। तीन वर्ष की बाल्यावस्था में माँ और युवा अवस्था के पहुँचते–पहुँचते पिताजी साथ छोड़कर इस संसार से चले गये। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद फैली महामारी में पत्नी, भाई, भाभी और चाचा चल बसे। अंत में पुत्री सरोज की मृत्यु ने निराला को भीतर तक झकझोर दिया। अपने जीवन में निराला ने मृत्यु का जैसा साक्षात्कार किया था, उसकी अभिव्यक्ति उनकी कई कविताओं में दिखाई देती है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने जीवन से समझौता न करते हुए अपने तरीके से ही जीवन जीना बेहतर समझा।

कविता के साथ उपन्यास, कहानी, आलोचना विधाओं को लिखने वाले निराला मूलतः कवि थे। उनकी कविताओं में जीवन का यथार्थ चित्रण यथा मानव की पीड़ा, परतंत्रता के प्रति तीव्र आक्रोश, अन्याय तथा विषम जीवन परिस्थितियों के प्रति संघर्ष करने की अदम्य गूँज सुनाई देती है।

कृतियाँ –

अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, रानी और कानी, नये पत्ते, राम की शक्ति पूजा, अर्चना, आराधना।

पाठ परिचय –

कवि निराला की प्रस्तुत कविता 'अभी न होगा मेरा अन्त' जीवन की युवावस्था को अभिव्यक्त करते हुए हृदय की जीवन्तता को प्रकट करती है। जीवन रूपी वन में वसन्त ऋतु रूपी हृदयोत्साह कभी–भी समाप्त होने वाला नहीं है। निराला का काव्य किसी एक मुकाम पर आकर ठहरने वाला नहीं है। वे इस कविता के माध्यम से निरन्तर उत्साह बनाये रखना चाहते हैं। तभी तो वे कहते हैं – "अभी न होगा मेरा अंत, अभी–अभी ही तो आया है मेरे जीवन में मृदुल वसन्त।" जीवन का यह पड़ाव हाथ पर हाथ रखकर बैठने के लिए न होकर जीवन के कर्म–सौन्दर्य को निष्ठापूर्वक बढ़ाते रहने के लिए है। यह कविता निराला के प्रखर आशावाद एवं जिजीविषा से लबरेज है। शब्द चयन एवं भाव सौन्दर्य अनुपम है।

'मातृ–वन्दना' कविता में निराला का राष्ट्रप्रेम मुखरित हुआ है, जिसमें वे अपने अर्जित सभी कर्मफलों को माँ भारती के चरणों में अर्पित कर अपने को धन्य महसूस कर रहे हैं। कवि जीवन–पथ के सभी विघ्न–बाधाओं को पार करता हुआ माँ की सेवा में अपना बलिदान कर उसे हर दुख से मुक्त करना चाहता है। विनय शिल्प में लिखी गयी यह एक अद्भुत कविता है।

अभी न होगा मेरा अन्त

अभी न होगा मेरा अन्त
अभी–अभी ही तो आया है
मेरे जीवन में मृदुल वसन्त –
अभी न होगा मेरा अन्त।

हरे–हरे ये पात
डालियाँ कलियाँ कोमल गात !

मैं ही अपना स्वप्न–मृदुल–कर
फेरूँगा निद्रित कलियों पर
जगा एक प्रत्यूष मनोहर

पुष्प–पुष्प से तन्द्रालस लालसा खींच लूँगा मैं
अपने नव जीवन का अमृत सहर्ष सींच दूँगा मैं

द्वार दिखा दूँगा फिर उनको
है मेरे वे जहाँ अनन्त –
अभी न होगा मेरा अन्त।

मेरे जीवन का यह है जब प्रथम चरण
इसमें कहाँ मृत्यु?
है जीवन ही जीवन
अभी पड़ा है आगे सारा यौवन
स्वर्ण–किरण कल्लोलों पर बहता रे, बालक–मन,
मेरे ही अविकसित राग से
विकसित होगा बन्धु, दिगन्त;
अभी न होगा मेरा अन्त।

मातृ-वन्दना

नर जीवन के स्वार्थ सकल
बलि हों तेरे चरणों पर, माँ
मेरे श्रम सिंचित सब फल।

जीवन के रथ पर चढ़कर
सदा मृत्यु पथ पर बढ़कर
महाकाल के खरतर शर सह
सकूँ, मुझे तू कर दृढ़तर;
जागे मेरे उर में तेरी
मूर्ति अश्रु जल धौत विमल
दृग जल से पा बल बलि कर दूँ
जननि, जन्म श्रम संचित फल।

बाधाएँ आएँ तन पर
देखूँ तुझे नयन मन भर
मुझे देख तू सजल दृगों से
अपलक, उर के शतदल पर;
क्लेद युक्त, अपना तन दूँगा
मुक्त करूँगा, तुझे अटल
तेरे चरणों पर देकर बलि
सकल श्रेय श्रम संचित फल।

कठिन शब्दार्थ

मृदुल	–	मनोहर, सुन्दर	**सकल**	–	सारा	**पात**	–	पत्ते
श्रम	–	मेहनत	**स्वप्न**	–	सपना	**उर**	–	हृदय
लालसा	–	इच्छा	**संचित**	–	कमाया हुआ	**यौवन**	–	जवानी,युवावस्था
दृग	–	आँख	**शतदल**	–	कमल			

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 'मृदुल वसन्त' जीवन के किस पड़ाव का प्रतीक है?
   (क) बचपन (ख) यौवन (ग) बुढ़ापा (घ) उपर्युक्त सभी
2. शतदल का शब्दार्थ है –
   (क) पतझड़ (ख) कुमुदिनी (ग) कमल (घ) भँवरा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. 'अभी न होगा मेरा अन्त' कविता में किस ऋतु के आगमन की बात कही गई है?
4. 'हरे–हरे ये पात' पंक्ति में कौन–सा अलंकार है?
5. कवि का कविता में किस प्रथम चरण की ओर संकेत है?
6. 'फेरूँगा निद्रित कलियों पर' पंक्ति में निद्रित कलियों का आशय क्या है?
7. 'मातृ–वन्दना' में कवि ने माँ संबोधन का प्रयोग किसके लिए किया है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. कविता 'अभी न होगा मेरा अंत' के अनुसार बसंत आगमन पर प्रकृति में कौन–से परिवर्तन परिलक्षित होते हैं?
9. कविता 'मातृ–वन्दना' के अनुसार कवि माँ के चरणों में क्या–क्या समर्पित करना चाहता है?

निबंधात्मक प्रश्न –

10. 'अभी न होगा मेरा अंत' कविता का मूल भाव स्पष्ट कीजिए?
11. 'मातृ–वन्दना' कविता का केन्द्रीय भाव अपने शब्दों में लिखिए?
12. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) हरे–हरे ये पात .... अमृत सहर्ष सींच दूँगा मैं।
    (ख) मेरे जीवन का यह है जब प्रथम चरण .... अभी न होगा मेरा अन्त।
    (ग) बाधाएँ आएँ तन पर .... सकल श्रेय श्रम संचित फल।

8
नागार्जुन
(जन्म : 1911 ई. / मृत्यु : 1998 ई.)

जीवन परिचय –

हिन्दी और मैथिली के अप्रतिम लेखक और कवि नागार्जुन का जन्म बिहार राज्य के दरभंगा जिले के सतलखा गाँव में हुआ था। उनका मूल नाम वैद्यनाथ मिश्र था। आरम्भिक शिक्षा संस्कृत पाठशाला में हुई, फिर अध्ययन के लिए वे बनारस और कोलकाता गए। 1936 में लंका गए और वहीं बौद्ध धर्म में दीक्षित हुए।

उन्होंने हिन्दी साहित्य में 'नागार्जुन' तथा मैथिली में 'यात्री' उपनाम से रचनाएँ की हैं। नागार्जुन ने कविता के साथ–साथ उपन्यास और अन्य गद्य विधाओं में भी लेखन किया है। उनका सम्पूर्ण कृतित्व नागार्जुन रचनावली के सात खण्डों में प्रकाशित है। उनको हिन्दी अकादमी, दिल्ली का शिखर सम्मान, उत्तरप्रदेश का भारत–भारती पुरस्कार तथा बिहार के राजेन्द्रप्रसाद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सामयिक बोध से गहराई तक जुड़े नागार्जुन की आन्दोलनधर्मी कविताओं को व्यापक लोकप्रियता मिली।

कृतियाँ – युगधरा, सतरंगे पंखों वाली, हजार–हजार बाँहों वाली, तुमने कहा था, पुरानी जूतियों का कोरस, आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने, मैं मिलटरी का बूढ़ा घोड़ा, तालाब की मछलियाँ, ओममंत्र, भूल जाओ पुराने सपने।

पाठ परिचय –

नागार्जुन की कविता 'कल और आज' ग्रीष्म की घोर तपिश भरी दुरूहता के पश्चात् वर्षा ऋतु के सहज और मनभावन आगमन का वर्णन करती है। ग्रीष्म ऋतु के हताश एवं उदास मुख कृषक, धूल स्नान करते पक्षीवृंद, सूखे खेतों का वीराना उजाड़पन और बदरंग आसमान जहाँ एक ओर समाज के सोपान पर छूटे हुए अंतिम आदमी का प्रतिनिधित्व करता है। वहीं दूसरी ओर प्रकृतिगत चित्रण की सहजता को भी दर्शाता है। वर्षा ऋतु का आगमन परिवर्तन का संकेत है। वर्षा के आगमन से प्रकृति–रूपी सुकन्या नृत्य करती हुई प्रतीत होती है। प्रकृति के समस्त उपादान भी उसका साथ देते प्रतीत होते हैं। ऋतु चक्र का अत्यन्त सजीव अंकन इस कविता की विशेषता है। ठेठ देशज उपादानों का प्रयोग मुग्धकारी है। भाषा की दृष्टि से नागार्जुन का ठेठ देसी अन्दाज मनोरम है।

'उषा की लाली' कविता में कवि नागार्जुन का प्रकृति प्रेम सहज रूप में मुखरित हुआ है। शिशु रूप में उगते सूर्य की अप्रतिम छटा से कवि का मन अभिभूत हो जाता है तथा उदय होते सूर्य की केसरी आभा जो कि हिमगिरि के स्वर्ण शिखर का आभास दे रही है, से कवि दूर नहीं होना चाहता है।

कल और आज

अभी कल तक
गालियाँ देती तुम्हें,
हताश खेतिहर,
अभी कल तक
धूल में नहाते थे
गोरैयों के झुण्ड,
अभी कल तक
पथराई हुई थी
धनहर खेतों की माटी,
अभी कल तक
धरती की कोख में
दुबके पड़े थे मेढ़क
अभी कल तक
उदास और बदरंग था आसमान !

और आज
ऊपर–ही–ऊपर तन गए हैं
तुम्हारे तंबू,
और आज
छमका रही है पावस रानी
बूँदा–बूँदियों की अपनी पायल,
और आज
चालू हो गई है
झींगुरों की शहनाई अविराम,
और आज
जोरों से कूक पड़े
नाचते थिरकते मोर,

और आज
आ गई वापस जान
दूब की झुलसी शिराओं के अन्दर,
और आज विदा हुआ चुपचाप ग्रीष्म,
समेटकर अपने लाव–लश्कर।

उषा की लाली

उषा की लाली में
अभी से गए निखर
हिमगिरि के कनक–शिखर।

आगे बढ़ा शिशु–रवि
बदली छवि, बदली छवि
देखता रह गया अपलक कवि।

डर था, प्रतिपल
अपरूप यह जादुई आभा
जाए न बिखर, जाए ना बिखर।

उषा की लाली में
भले हो उठे थे निखर
हिमगिरि के कनक शिखर।

कठिन शब्दार्थ

उषा की लाली

हिमगिरि	–	हिमालय
कनक	–	सोना/सोने जैसा
शिखर	–	चोटी
रवि	–	सूरज

कल और आज

खेतिहर	–	किसान
पथराई	–	पत्थर के समान
बदरंग	–	फीका
अविराम	–	लगातार
दूब	–	घास

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. ग्रीष्म की धूल में कौन नहाते थे?
   (क) कबूतर (ख) गोरैया (ग) झिंगुर (घ) मेढ़क
2. नागार्जुन हिन्दी के अतिरिक्त और किस भाषा में रचना कर्म करते थे?
   (क) मैथिली (ख) अवधी (ग) बांग्ला (घ) ब्रजभाषा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. 'उषा की लाली' कविता में किस समय का वर्णन हुआ है?
4. खेतों की मिट्टी पथराई हुई क्यों थी?
5. कवि ने आसमान को बदरंग क्यों बताया है?
6. 'उषा की लाली' कविता के अनुसार कवि को क्या डर लग रहा था?
7. कविता 'उषा की लाली' में हिमगिरि किसे कहा गया है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. वर्षा ऋतु के आगमन से प्रकृति में कौन–कौन से बदलाव आए हैं?
9. 'उषा की लाली' कविता का शिल्प सौन्दर्य लिखिए?

निबंधात्मक प्रश्न –

10. 'कल और आज' कविता का मूल भाव स्पष्ट कीजिए।
11. आप भी अपने जीवन में प्रकृति के अनुपम दृश्यों को देखते होंगे। किन दृश्यों को देखकर आपका हृदय कवि की तरह प्रफुल्लित हो उठता है? अपने शब्दों में लिखिए।
12. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) और आज .... झींगुरों की शहनाई अविराम।
    (ख) डर था, प्रतिफल......................... हिमगिरि के कनक शिखर।

९
ऋतुराज
(जन्म : 1940 ई.)

जीवन परिचय -

ऋतुराज का जन्म 10 फरवरी सन् 1940 को भरतपुर में हुआ। राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से उन्होंने अंग्रेजी में एम.ए. किया। चालीस वर्षों तक अंग्रेजी साहित्य के अध्यापन के बाद अब सेनानिवृत्त होकर वे जयपुर में रहते हैं। उनके अब तक आठ कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें एक मरणधर्मा और अन्य, पुल पर पानी, सुरत निरत और लीला मुखारविन्द प्रमुख हैं। उन्हें सोमदत्त, परिमल सम्मान, मीरा पुरस्कार, पहल सम्मान तथा बिहारी पुरस्कार मिल चुके हैं।

मुख्यधारा से अलग समाज के हाशिए के लोगों की चिंताओं को ऋतुराज ने अपने लेखन का विषय बनाया है। उनकी कविताओं में दैनिक जीवन के अनुभवों का यथार्थ है और वे अपने आसपास के रोज़मर्रा में घटित होने वाले सामाजिक विसंगतियों और विडंबनाओं पर गहरी निगाह डालते हैं। यही कारण है कि उनकी भाषा अपने परिवेश और लोक जीवन से जुड़ी हुई है।

पाठ परिचय -

'कन्यादान' कविता में माँ बेटी को स्त्री के परंपरागत 'आदर्श' रूप से हटकर सीख दे रही है। कवि का मानना है कि समाज–व्यवस्था द्वारा स्त्रियों के लिए आचरण संबंधी प्रतिमान गढ़ लिए जाते हैं। वे आदर्श के मुखौटे में बंधन होते हैं। 'कोमलता' के गौरव में 'कमजोरी' का उपहास छिपा रहता है। लड़की जैसा न दिखाई देने में इसी आदर्शीकरण का प्रतिकार है। बेटी, माँ के सबसे निकट और उसके सुख–दुःख की सहेली होती है। इसी कारण उसे अंतिम पूँजी कहा गया है। कविता में कोरी भावुकता नहीं, बल्कि माँ के संचित अनुभवों की पीड़ा की प्रामाणिक अभिव्यक्ति है। इस छोटी–सी कविता में स्त्री जीवन के प्रति ऋतुराज की गहरी संवेदना अभिव्यक्त हुई है।

कन्यादान

कितना प्रामाणिक था उसका दुख
लड़की को दान में देते वक्त
जैसे वही उसकी अंतिम पूँजी हो

लड़की अभी सयानी नहीं थी
अभी इतनी भोली सरल थी
कि उसे सुख का आभास तो होता था
लेकिन दुख बाँचना नहीं आता था
पाठिका थी वह धुँधले प्रकाश की
कुछ तर्कों और कुछ लयबद्ध पंक्तियों की।

माँ ने कहा पानी में झाँककर
अपने चेहरे पर मत रीझना
आग रोटियाँ सेंकने के लिए है
जलने के लिए नहीं।
वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह
बंधन है स्त्री जीवन के

माँ ने कहा लड़की होना
पर लड़की–जैसी दिखाई मत देना।

कठिन शब्दार्थ

प्रामाणिक – प्रमाणों से सिद्ध
सयानी – बड़ी
आभास – अहसास
बाँचना – पढ़ना
भ्रम – धोखा
लयबद्ध – सुरताल
रीझना – मन ही मन प्रसन्न होना
आभूषण – गहना
शाब्दिक – शब्दों का

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. कवि ने अन्तिम पूँजी किसे बताया था?
   (क) माँ को (ख) लड़की को (ग) स्त्री जीवन को (घ) आग को
2. दुख बाँचना किसे नहीं आता था?
   (क) लड़की को (ख) माँ को (ग) समाज को (घ) आभूषणों को

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कवि ने स्त्री जीवन का बंधन किसे बताया है?
4. माँ ने लड़की को कैसा नहीं दिखने के लिए कहा है?
5. 'अपने चेहरे पर मत रीझना' का क्या तात्पर्य है?
6. माँ को अपनी बेटी अन्तिम पूँजी क्यों लग रही थीं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. आपके विचार से माँ ने ऐसा क्यों कहा कि लड़की होना पर लड़की जैसी मत दिखाई देना?
8. माँ ने बेटी को क्या–क्या सीख दी?
9. ''वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह
   बंधन हैं स्त्री जीवन के''
   उपरोक्त पंक्तियों का भाव स्पष्ट कीजिए?
10. 'कन्यादान' कविता में माँ की मूल चिन्ता क्या है?

निबंधात्मक प्रश्न –

11. आपकी दृष्टि में कन्या के साथ दान की बात करना कहाँ तक उचित है? समझाइए।
12. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) माँ ने कहा पानी में झाँककर .... जलने के लिए नहीं।
    (ख) वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह ....पर लड़की–जैसी दिखाई मत देना।

गद्य खंड

10
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
(जन्म : 1850 ई. / मृत्यु : 1885 ई.)

जीवन परिचय –

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म सन् 1850 में काशी के एक प्रतिष्ठित और धनी परिवार में हुआ था। उनके पिता श्री गोपालचन्द्र भी हिन्दी के अच्छे कवि थे। भारतेन्दु जी के बाल्यकाल में ही उनके पिता का आकस्मिक देहावसान हो गया और वे उस विपुल सम्पत्ति के एक मात्र उत्तराधिकारी रह गए। उन्होंने अपनी सम्पत्ति लोकसेवा और साहित्य सेवा के कार्यों में लगा दी। उनके द्वारा स्थापित किया हुआ हाई स्कूल बनारस में अब हरिश्चन्द्र कॉलेज के नाम से चल रहा है। वे जन्म से ही कुशाग्र बुद्धि और प्रतिभाशाली थे। कविता करने का शौक भी उन्हें बचपन से ही था। 16 वर्ष की आयु होने पर तो उन्होंने ग्रन्थ रचना आरम्भ कर दी। लगभग 35 वर्ष की अल्प आयु में ही सन् 1885 ई. में उनका स्वर्गवास हो गया।

भारतेन्दु को वर्तमान हिन्दी गद्य का प्रवर्तक माना जाता है। भाषा और साहित्य दोनों पर उनका स्थायी प्रभाव पड़ा है। उन्होंने गद्य की भाषा को परिमार्जित कर उसे मधुर और स्वच्छ बनाया। वे सुधारवादी थे। प्राचीन और नवीन का सामंजस्य भारतेन्दु जी की सबसे बड़ी विशेषता रही है।

आपकी भाषा में संस्कृत के तद्भव शब्दों की ही बहुतायत है। लोकोक्तियाँ और मुहावरों के प्रयोग से उनकी भाषा में और भी लालित्य आ गया है। स्थान–स्थान पर रोचकता बढ़ाने के लिए उन्होंने हास्य और व्यंग्य के भी प्रयोग किए हैं।

उनकी देश सेवा और साहित्य सेवा से प्रभावित हो उस युग की जनता ने उन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि से सुशोभित किया।

इन्होंने कविवचनसुधा, हरिश्चन्द्र मैगजीन का सम्पादन किया। भारतेन्दु ने कुल मिलाकर 175 ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें बहुत–से केवल अनुवाद ही हैं। इनके द्वारा लिखे जिन नाटकों का हिन्दी संसार में बड़ा आदर है; उनमें वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, कर्पूर मंजरी, सत्य हरिश्चन्द्र, चन्द्रावली नाटिका, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, नीलदेवी, मुद्राराक्षस आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

पाठ परिचय –

प्रस्तुत निबंध भारतेन्दुजी की विनोद–प्रिय प्रवृत्ति का प्रतिनिधि उदाहरण है। इसमें उन्होंने तत्कालीन समाज का एक व्यंग्यपूर्ण चित्र अपनी हास्य–व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। संसार में प्रत्येक मनुष्य अपने यश के लिए क्या–क्या प्रयत्न करता है, वह अपना नाम अमर करने के लिए किस प्रकार लालायित रहता है – यही इस पाठ का वर्ण्य विषय है।

समाज धर्मान्धता, स्वार्थपरता तथा अंग्रेजी शासन की अत्याचारपूर्ण नीति से किस प्रकार जर्जरित हो गया था तथा शिक्षा के पवित्र क्षेत्र में भी लोग क्या सोचते थे, इन बातों का व्यंग्यमय चित्र यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

एक अदभुत अपूर्व स्वप्न

आज रात्रि को पर्यंक पर जाते ही अचानक आँख लग गई। सोते में सोचता क्या हूँ कि इस चलायमान शरीर का कुछ ठिकाना नहीं। इस संसार में नाम स्थिर रखने की कोई युक्ति निकल आवे तो अच्छा है, क्योंकि यहाँ की रीति देख मुझे पूरा विश्वास होता है कि इस चपल जीवन का क्षण–भर का भरोसा नहीं। ऐसा कहा भी है –

स्वाँस स्वाँस पर हरि भजो वृथा स्वाँस मत खोय ।
न जाने या स्वाँस को आवन होय न होय ।।

देखो समय सागर में एक दिन सब संसार अवश्य मग्न हो जायेगा। कालवश शशि सूर्य भी नष्ट हो जायेंगे। आकाश में तारे भी कुछ काल पीछे दृष्टि न आवेंगे। केवल कीर्ति–कमल संसार–सरोवर में रहे वा न रहे, और सब तो एक तप्त तवे की बूँद हुए बैठे हैं। इस हेतु बहुत काल तक सोच समझ प्रथम यह विचार किया कि कोई देवालय बनाकर छोड़ जाऊँ, परन्तु थोड़ी ही देर में समझ में आ गया कि इन दिनों की सभ्यता के अनुसार इससे बड़ी कोई मूर्खता नहीं, और यह तो मुझे भली भाँति मालूम है कि यही अँग्रेजी शिक्षा रही तो मन्दिर की ओर मुख फेर कर भी कोई नहीं देखेगा। इस कारण विचार का परित्याग करना पड़ा। फिर पड़े–पड़े पुस्तक रचने की सूझी। परन्तु इस विचार में बड़े काँटे निकले क्योंकि बनाने की देर न होगी कि कीट 'क्रिटिक' काट कर आधी से अधिक निगल जायेंगे। यश के स्थान पर शुद्ध अपयश प्राप्त होगा। जब देखा कि अब टूटे–फूटे विचारों से काम नहीं चलेगा, तब लाड़िली नींद को दो रात पड़ोसियों के घर भेज आँख बन्द कर शम्भु की–सी समाधि लगा गया, यहाँ तक कि इकसठ वा इक्यावन वर्ष उसी ध्यान में बीत गए। अन्त को एक मित्र के बल से अति उत्तम बात की पूँछ हाथ में पड़ गई। स्वप्न ही में प्रभात होते ही पाठशाला बनाने का विचार दृढ़ किया। परन्तु जब थैली में हाथ डाला तो केवल ग्यारह गाड़ी ही मुहरें निकलीं। आप जानते हैं इतने में मेरी अपूर्व पाठशाला का एक कोना भी नहीं बन सकता था। निदान अपने इष्ट मित्रों की भी सहायता लेनी पड़ी। ईश्वर को कोटि धन्यवाद देता हूँ जिसने हमारी ऐसी सुनी। यदि ईटों के ठोर मुहर चुनवा लेते तब भी तो दस पाँच रेल रूपये और खर्च पड़ते। होते–होते सब हरि कृपा से बन कर ठीक हुआ। इसमें व्यय हुआ वह तो मुझे स्मरण नहीं है, परन्तु इतना अपने मुन्शी से मैंने सुना था कि एक का अंक और तीन सौ सत्तासी शून्य अकेले पानी में पड़े थे। बनने को तो एक क्षण में सब बन गया था, परन्तु उसके

जोड़ने में पूरे पच्चीस वर्ष लगे। जब हमारी अपूर्व पाठशाला बन कर ठीक हुई, उसी दिन हमने हिमालय की कन्दराओं में से खोज–खोज कर अनेक उद्दण्ड पंडित बुलवाये, जिनकी संख्या पौन दशमलव से अधिक नहीं है। इस पाठशाला में अनगिनत अध्यापक नियत किये गये, परन्तु मुख्य केवल ये हैं, पंडित मुग्धमणि शास्त्री तर्क वाचस्पति, प्रथम अध्यापक। पाखंडप्रिय धर्माधिकारी, अध्यापक धर्मशास्त्र। प्राणान्तकप्रसाद वैयाकरण अध्यापक वैद्यकशास्त्र। लुप्तलोचन ज्योतिषाभरण, अध्यापक ज्योतिष शास्त्र। शीलदावानल नीतिदर्पण, अध्यापक नीतिशास्त्र और आत्मविद्या।

इन पूर्वोक्त पण्डितों के आ जाने पर अर्ध रात्रि गये पाठशाला खोलने बैठे। इस समय सब इष्ट मित्रों के सम्मुख उस परमेश्वर को कोटि धन्यवाद दिया, जो संसार को बनाकर क्षण भर में नष्ट कर देता है, और जिसने विद्या, शील, बल के सिवाय मान, मूर्खता, परद्रोह, परनिन्दा आदि परम गुणों से इस संसार को विभूषित किया है। हम कोटि धन्यवादपूर्वक आज इस सभा के सम्मुख अपने स्वार्थरत चित्त की प्रशंसा करते हैं जिसके प्रभाव से ऐसे उत्तम विद्यालय की नींव पड़ी। उस ईश्वर को ही अंगीकार था कि हमारा इस पृथ्वी पर कुछ नाम रहे, नहीं तो जब द्रव्य की खोज में डूबते–डूबते बचे थे तब कौन जानता था कि हमारी कपोल–कल्पना सत्य हो जायगी। परन्तु ईश्वर के अनुग्रह से हमारे सब संकट दूर हुए और अन्त समय हमारी अभिलाषा पूर्ण हुई। हम अपने इष्ट मित्रों की सहायता को भी न भूलेंगे कि जिनकी कृपा से इतना द्रव्य हाथ आया कि पाठशाला का सब खर्च चल गया और दस पाँच पीढ़ी तक हमारी सन्तान के लिए बच रहा। हमारे पुत्र, परिवार के लोग चैन से हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे। हे सज्जनो, यह तुम्हारी कृपा का विस्तार है कि तन मन से आप इस धर्म–कार्य में प्रवृत्त हुए, नहीं मैं दो हाथ पैर वाला बेचारा मनुष्य आपके आगे कौन कीड़ा था जो ऐसे दुष्कर कर्म को कर लेता? यहाँ तो घर की केवल मूँछें ही मूँछें थीं। कुछ में कुछ गंगाजल, काम आपकी कृपा से भली–भाँति हो गया। मैं आज के दिन को नित्यता का प्रथम दिन मानता हूँ, जो औरों को अनेक साधन से भी मिलना दुर्लभ है। धन्य है उस परमात्मा को जिसने हमारे यश के डहडहे अंकुर फिर हरे किये। हे सज्जन शुभचिन्तको ! संसार में पाठशालाएँ अनेक हुई होंगी, परन्तु हरि कृपा से जो सकलपूर्ण कामधेनु यह पाठशाला है वैसी, अचरज़ नहीं कि आपने इस जन्म में न देखी सुनी हो। होनहार बलवान है, नहीं तो कलिकाल में ऐसी पाठशाला का बनाना कठिन था। देखिए, यह हम लोगों के भाग्य का उदय है कि ये महामुनि मुग्धमणि शास्त्री बिना प्रयास हाथ लग गये जिनको सतयुग के आदि में इन्द्र अपनी पाठशाला के निमित्त समुद्र और वन जंगलों में खोजता फिरा, अन्त को हार मान वृहस्पति को रखना पड़ा। हम फिर भी कहते हैं कि यह हमारे भाग्य की महिमा थी कि ये ही पण्डितराज मृगयाशील श्वान के मुख में शशी के धोखे बद्रिकाश्रम की एक कन्दरा में से पड़ गये। इनकी बुद्धि और विद्या की प्रशंसा करने में सरस्वती भी लजाती है। इसमें संदेह नहीं कि इनके थोड़े ही परिश्रम से पण्डित मूर्ख और अबोध पण्डित हो जायेंगे।

हे मित्र ! मेरे निकट जो महाशय बैठे हैं इनका नाम पाखण्डप्रिय है। किसी समय इस देश में इनकी बड़ी मानता थी। सब स्त्री पुरूषों को इन्होंने मोह रक्खा था। परन्तु अब कालचक्र के मारे अँगरेजी पढ़े हिन्दुस्तानियों ने इनकी बड़ी दुर्दशा की। इस कारण प्राण बचाकर हिमालय की तराई में हरित दूर्वा पर सन्तोष कर अपना कालक्षेप करते थे। विपत्ति ईश्वर किसी पर न डाले। जब तक इनका राज था, दृष्टि बचाकर भोग लगाया करते थे। कहाँ अब श्वान–शृंगाल के संग दिन काटने पड़े। परन्तु फिर भी इनकी बुद्धि पर पूरा विश्वास है कि एक कार्तिक मास भी इनको स्थिर रह जाने देंगे तो हरि कृपा से समस्त नवीन धर्मों पर चार–पाँच दिन में पानी फेर देंगे।

इनसे भिन्न, पण्डित प्राणांतकप्रसाद भी प्रशंसनीय पुरूष हैं। जब तक इस घट में प्राण है तब तक न किसी पर इनकी प्रशंसा बन पड़ी, न बन पड़ेगी। ये महावैद्य के नाम से इस संसार में विख्यात हैं। चिकित्सा में ऐसे कुशल हैं कि चिता पर चढ़ते–चढ़ते रोगी इनके उपकार का गुण नहीं भूलता। कितना ही रोग से पीड़ित क्यों न हो, क्षण भर में स्वर्ग के सुख को प्राप्त होता है। जब तक औषधि नहीं देते केवल उसी समय तक प्राणी के संसारी विथा लगी रहती है। आप लोग कुछ काल की अपेक्षा कीजिये। इनकी चिकित्सा और चतुराई अपने आप प्रकट हो जायेगी। यद्यपि आपके अमूल्य समय में बाधा हुई, परन्तु यह भी स्वदेश की भलाई का काम था, इस हेतु आप आतुर न हूजिये और शेष अध्यापकों की अमृतमय जीवन कहानी श्रवण कीजिए।

ये लुप्तलोचन ज्योतिषाभरण बड़े उद्दण्ड पण्डित हैं। ज्योतिष विद्या में अति कुशल हैं। कुछ नवीन तारे भी गगन में जाकर ये ढूँढ़ आये हैं और कितने ही नवीन ग्रन्थों की भी इन्होंने रचना कर डाली है। उनमें से "तामिस्र–मकरालय" प्रसिद्ध और प्रशंसनीय है। यद्यपि इनको विशेष दृष्टि नहीं आता, परन्तु तारे इनकी आँखों में भली–भाँति बैठ गये हैं।

रहे पण्डित शीलदावानल नीति–दर्पण। इनके गुण अपार हैं। समय थोड़ा है, इस हेतु थोड़ा–सा आप लोगों के आगे इनका वर्णन किया जाता है। ये महाशय बाल–ब्रह्मचारी हैं। अपनी आयु भर नीतिशास्त्र पढ़ते–पढ़ाते रहे हैं। इनसे नीति तो बहुत से महात्माओं ने पढ़ी थी परन्तु वेणु, बाणासुर, रावण, दुर्योधन, शिशुपाल, कंस आदि इनके मुख्य शिष्य थे। और अब भी कोई कठिन काम आकर पड़ता है तो अँगरेजी न्यायकर्ता भी इनकी अनुमति लेकर आगे बढ़ते हैं। हम अपने भाग्य की कहाँ तक सराहना करें। ऐसा तो संयोग इस संसार में परम दुर्लभ है। अब आप सब सज्जनों से यही प्रार्थना है कि आप अपने–अपने लड़कों को भेजें और व्यय आदि की कुछ चिंता न करें, क्योंकि प्रथम तो हम किसी अध्यापक को मासिक देंगे ही नहीं और दिया भी तो अभी दस–पाँच वर्ष पीछे देखा जायेगा। यदि हमको भोजन की श्रद्धा हुई तो भोजन का बन्धान बाँध देंगे, नहीं यह नियत कर देंगे कि जो पाठशाला संबंधी द्रव्य हो उसका वे सब मिलकर नास लिया करें।

कठिन शब्दार्थ

पर्यंक	–	पलंग	**क्रिटिक**	–	आलोचक
कोटि	–	करोड़	**कामधेनु**	–	इच्छा पूर्ति करने वाली देवताओं की गाय
मृगयाशील	–	शिकाररत	**कन्दरा**	–	गुफा
तराई	–	तलहटी	**दूर्वा**	–	दूब, घास
शृगाल	–	सियार			

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म स्थान है –

   (क) काशी (ख) पटना (ग) जयपुर (घ) जबलपुर

2. पर्यंक का शब्दार्थ है –

   (क) पलंग (ख) कुर्सी (ग) पाठशाला (घ) देवालय

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. लेखक के मन में प्रथम क्या विचार आया?
4. उद्दण्ड पंडित कहाँ से बुलवाये गये थे?
5. ज्योतिष विद्या में कुशल पण्डित का क्या नाम था?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

6. लेखक ने देवालय बनाने का विचार क्यों त्याग दिया?
7. पुस्तक लेखन के विचार पर लेखक क्यों सहम गया?
8. पण्डित प्राणान्तकप्रसाद की क्या विशेषता बताई गई है?

निबंधात्मक प्रश्न –

9. सप्रमाण सिद्ध कीजिये कि भारतेन्दुजी ने इस निबंध में तत्कालीन समाज का चित्र व्यंग के माध्यम उपस्थित किया है।
10. भारतेन्दुजी की शैली पर प्रकाश डालिए।
11. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

    (क) इस चलायमान शरीर का कुछ ठिकाना नहीं .... इस चपल जीवन का क्षण–भर का भरोसा नहीं।

    (ख) समय सागर में एक दिन सब संसार अवश्य मग्न हो जायेगा .... एक तप्त तवे की बूँद हुए बैठे हैं।

11
प्रेमचन्द
(जन्म : 1880 ई. / मृत्यु : 1936 ई.)

जीवन परिचय –

हिन्दी जगत में कलम के सिपाही के नाम से मशहूर मुंशी प्रेमचंद का जन्म वाराणसी जिले के लमही ग्राम में हुआ था। उनका मूल नाम धनपतराय था। सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देने के बाद उन्होंने अपना सारा जीवन लेखन कार्य के प्रति समर्पित कर दिया। प्रेमचंद उर्दू में नवाबराय के नाम से लेखन कार्य करते थे। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें उपन्यास सम्राट कहकर संबोधित किया था।

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में किसानों, दलितों, नारियों की वेदना और वर्ण–व्यवस्था की कुरीतियों का मार्मिक चित्रण किया है। उन्होंने समाज–सुधार और राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत अनेक उपन्यासों एवं कहानियों की रचना की। कथा–संगठन, चरित्र–चित्रण, कथोपकथन आदि की दृष्टि से उनकी रचनाएँ बेजोड़ हैं। उनकी भाषा सजीव, मुहावरेदार और बोलचाल के निकट है। हिन्दी भाषा को लोकप्रिय बनाने में उनका विशेष योगदान है।

प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह 'सोजे–वतन' नाम से आया जो 1908 में प्रकाशित हुआ। 'सोजे वतन' यानी देश का दर्द। देश भक्ति से ओत–प्रोत होने के कारण इस पर अंग्रेजी सरकार ने रोक लगा दी और लेखक को भी भविष्य में इस तरह का लेखन न करने की चेतावनी दी। इसके कारण उन्हें नाम बदलकर लिखना पड़ा। मरणोपरान्त उनकी कहानियाँ मानसरोवर नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुईं।

कृतियाँ –

कहानी संग्रह – मानसरोवर (आठ भाग)
उपन्यास – निर्मला, सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कर्मभूमि, गोदान, गबन
नाटक – कर्बला, संग्राम
पत्रिकाएँ – माधुरी, हंस, मर्यादा, जागरण

पाठ परिचय –

'ईदगाह' मुंशी प्रेमचन्द की बाल–मनोविज्ञान को चरितार्थ करने वाली एक प्रतिनिधि कहानी है। इस कहानी में ईद जैसे महत्वपूर्ण त्योहार को आधार बनाकर ग्रामीण मुस्लिम जीवन का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है। अभाव उम्र से पूर्व बच्चों में कैसे बड़ों जैसी समझदारी पैदा कर

देता है यह इस कहानी में हामिद के चरित्र से साफ जाहिर होता है। मेले में हामिद अपनी हर इच्छा पर संयम रखने में विजयी होता है। साथ ही रुस्तमे–हिन्द चिमटे के माध्यम से प्रेमचन्द ने श्रम के सौन्दर्य एवं महत्व को भी उद्घाटित किया है। चित्रात्मक भाषा की दृष्टि से भी यह कहानी अनूठी है।

ईदगाह

रमज़ान के पूरे तीस रोज़ों के बाद ईद आई है। कितना मनोहर, कितना सुहावना प्रभात है। वृक्षों पर कुछ अजीब हरियाली है, खेतों में कुछ अजीब रौनक है, आसमान पर कुछ अजीब लालिमा है। आज का सूर्य देखो, कितना प्यारा, कितना शीतल है मानो संसार को ईद की बधाई दे रहा है। गाँव में कितनी हलचल है। ईदगाह जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। किसी के कुरते में बटन नहीं हैं। पड़ोस के घर से सुई–धागा लेने दौड़ा जा रहा है। किसी के जूते कड़े हो गए हैं। उनमें तेल डालने के लिए तेली के घर भागा जाता है। जल्दी–जल्दी बैलों को सानी–पानी दे दें। ईदगाह से लौटते–लौटते दोपहर हो जाएगी। तीन कोस का पैदल रास्ता, फिर सैकड़ों आदमियों से मिलना–भेंटना। दोपहर के पहले लौटना असंभव है। लड़के सबसे ज्यादा प्रसन्न हैं। किसी ने एक रोज़ा रखा है, वह भी दोपहर तक, किसी ने वह भी नहीं ; लेकिन ईदगाह जाने की खुशी उनके हिस्से की चीज है। रोज़े बड़े–बूढ़ों के लिए होंगे। इनके लिए तो ईद है। रोज ईद का नाम रटते थे आज वह आ गई। अब जल्दी पड़ी है कि लोग ईदगाह क्यों नहीं चलते ? इन्हें गृहस्थी की चिंताओं से क्या प्रयोजन! सेवैयों के लिए दूध और शक्कर घर में है या नहीं, इनकी बला से, ये तो सेवैयाँ खाएँगे। वह क्या जाने कि अब्बाजान क्यों बदहवास चौधरी कायमअली के घर दौड़े जा रहे हैं। उन्हें क्या खबर कि चौधरी आज आँखें बदल लें, तो यह सारी ईद मुहर्रम हो जाए। उनकी अपनी जेबों में तो कुबेर का धन भरा हुआ है। बार–बार जेब से अपना खजाना निकालकर गिनते हैं और खुश होकर फिर रख लेते हैं। महमूद गिनता है, एक–दो, दस–बारह! उसके पास बारह पैसे हैं। मोहसिन के पास एक, दो, तीन, आठ, नौ, पन्द्रह पैसे हैं। इन्हीं अनगिनती पैसों में अनगिनती चीज़ें लाएँगे– खिलौने, मिठाइयाँ, बिगुल, गेंद और न जाने क्या–क्या! और सबसे ज़्यादा प्रसन्न है हामिद। वह चार–पाँच साल का गरीब सूरत, दुबला–पतला लड़का, जिसका बाप गत वर्ष हैज़े की भेंट हो गया और माँ न जाने क्यों पीली होती–होती एक दिन मर गई। किसी को पता न चला, क्या बीमारी है। कहती भी तो कौन सुनने वाला था। दिल पर जो कुछ बीतती थी, वह दिल में ही सहती थी और जब न सहा गया तो संसार से विदा हो गई। अब हामिद अपनी बूढ़ी दादी अमीना की गोद में सोता है और उतना ही प्रसन्न है। उसके अब्बाजान रुपये कमाने गए हैं। बहुत–सी थैलियाँ लेकर आएँगे। अम्मीजान अल्लाह मियाँ के

घर से उसके लिए बड़ी अच्छी–अच्छी चीज़ें लाने गई हैं ; इसलिए हामिद प्रसन्न है। आशा तो बड़ी चीज़ है, और फिर बच्चों की आशा! उनकी कल्पना तो राई का पर्वत बना लेती है। हामिद के पाँव में जूते नहीं हैं, सिर पर एक पुरानी–धुरानी टोपी है, जिसका गोटा काला पड़ गया है, फिर भी वह प्रसन्न है। जब उसके अब्बाजान थैलियाँ और अम्मीजान नियामतें लेकर आएँगी, तो वह दिल के अरमान निकाल लेगा। तब देखेगा महमूद, मोहसिन, नूरे और सम्मी कहाँ से उतने पैसे निकालेंगे। अभागिन अमीना अपनी कोठरी में बैठी रो रही है। आज ईद का दिन और उसके घर में दाना नहीं! आज आबिद होता तो क्या इसी तरह ईद आती और चली जाती! इस अंधकार और निराशा में वह डूबी जा रही थी। किसने बुलाया था इस निगोड़ी ईद को ? इस घर में उसका काम नहीं ; लेकिन हामिद! उसे किसी के मरने–जीने से क्या मतलब ? उसके अंदर प्रकाश है, बाहर आशा। विपत्ति अपना सारा दल–बल लेकर आए, हामिद की आनंद – भरी चितवन उसका विध्वंस कर देगी।

हामिद भीतर जाकर दादी से कहता है – तुम डरना नहीं अम्माँ, मैं सबसे पहले आऊँगा। बिल्कुल न डरना!

अमीना का दिल कचोट रहा है। गाँव के बच्चे अपने–अपने बाप के साथ जा रहे हैं। हामिद का अमीना के सिवा और कौन है! उसे कैसे अकेले मेले जाने दे ? उस भीड़–भाड़ में बच्चा कहीं खो जाए तो क्या हो ! नहीं, अमीना उसे यों न जाने देगी। नन्हीं–सी जान! तीन कोस चलेगा कैसे! पैर में छाले पड़ जाएँगे। जूते भी तो नहीं हैं। वह थोड़ी–थोड़ी दूर पर उसे गोद ले लेगी ; लेकिन यहाँ सेवैयाँ कौन पकाएगा ? पैसे होते तो लौटते–लौटते सब सामग्री जमा करके चटपट बना लेती। यहाँ तो घंटों चीज़ें जमा करते लगेंगे। माँगे ही का तो भरोसा ठहरा। उस दिन फ़हीमन के कपड़े सिले थे। आठ आने पैसे मिले थे। उस अठन्नी को ईमान की तरह बचाती चली आती थी इसी ईद के लिए, लेकिन कल ग्वालन सिर पर सवार हो गई तो क्या करती! हामिद के लिए कुछ नहीं है, तो दो पैसे का दूध तो चाहिए ही। अब तो कुल दो आने पैसे बच रहे हैं। तीन पैसे हामिद की जेब में, पाँच अमीना के बटुवे में। यही तो बिसात है और ईद का त्योहार, अल्लाह ही बेड़ा पार लगाए। सभी को सेवैयाँ चाहिए और थोड़ा किसी की आँखों नहीं लगता। किस–किस से मुँह चुराएगी। और मुँह क्यों चुराए ? साल–भर का त्योहार है। जिंदगी ख़ैरियत से रहे, उनकी तक़दीर भी तो उसी के साथ है। बच्चे को खुदा सलामत रखें, ये दिन भी कट जाएँगे।

गाँव से मेला चला। और बच्चों के साथ हामिद भी जा रहा था। कभी सब–के–सब दौड़कर आगे निकल जाते। फिर किसी पेड़ के नीचे खड़े होकर साथवालों का इंतजार करते। ये लोग क्यों इतना धीरे–धीरे चल रहे हैं! हामिद के पैरों में तो जैसे पर लग गए हैं। वह कभी थक सकता है ! शहर का दामन आ गया। सड़क के दोनों ओर अमीरों के बगीचे हैं। पक्की चारदीवारी बनी हुई है। पेड़ों में आम और लीचियाँ लगी हुई हैं। कभी–कभी कोई लड़का कंकड़ी उठाकर आम पर निशाना लगाता है। माली अंदर से गाली देता हुआ निकलता है। लड़के वहाँ से एक फर्लांग पर हैं। खूब हँस रहे हैं। माली को कैसे उल्लू बनाया है।

बड़ी–बड़ी इमारतें आने लगीं। यह अदालत है, यह कॉलेज है, यह क्लब–घर है! इतने बड़े कॉलेज में कितने लड़के पढ़ते होंगे? सब लड़के नहीं हैं जी! बड़े–बड़े आदमी हैं, सच! उनकी बड़ी–बड़ी मूँछें हैं। इतने बड़े हो गए, अभी तक पढ़ने जाते हैं। न जाने कब तक पढ़ेंगे और क्या करेंगे इतना पढ़कर। हामिद के मदरसे में दो–तीन बड़े–बड़े लड़के हैं, बिल्कुल तीन कौड़ी के। रोज मार खाते हैं, काम से जी चुराने वाले। इस जगह भी उसी तरह के लोग होंगे और क्या। क्लब–घर में जादू होता है। सुना है, यहाँ मुर्दे की खोपड़ियाँ दौड़ती हैं। और बड़े–बड़े तमाशे होते है, पर किसी को अंदर नहीं जाने देते। और यहाँ शाम को साहब लोग खेलते है। बड़े–बड़े आदमी खेलते हैं, मूँछों–दाढ़ीवाले। और मेमें भी खेलती हैं, सच! हमारी अम्माँ को वह दे दो, क्या नाम है, बैट, तो उसे पकड़ ही न सकें। घुमाते ही लुढ़क न जाएँ।

महमूद ने कहा – हमारी अम्मीजान का तो हाथ काँपने लगे, अल्ला कसम।

मोहसिन बोला – अम्मी, मनों आटा पीस डालती हैं। ज़रा–सा बैट पकड़ लेंगी, तो हाथ काँपने लगे? सैकड़ों घड़े पानी रोज निकालती हैं। पाँच घड़े तो मेरी भैंस पी जाती है। किसी मेम को एक घड़ा पानी भरना पड़े तो आँखों तले अँधेरा आ जाए।

महमूद – लेकिन दौड़ती तो नहीं, उछल–कूद तो नहीं सकतीं।

मोहसिन – हाँ, उछल–कूद नहीं सकतीं, लेकिन उस दिन मेरी गाय खुल गई थी और चौधरी के खेत में जा पड़ी थी, तो अम्माँ इतना तेज़ दौड़ी कि मैं उन्हें न पा सका, सच?

आगे चले। हलवाइयों की दुकानें शुरु हुईं। आज खूब सजी हुई थीं। इतनी मिठाइयाँ कौन खाता है? देखो न, एक–एक दुकान पर मनों होंगी। सुना है, रात को जिन्नात आकर खरीद ले जाते हैं। अब्बा कहते थे कि आधी रात को एक आदमी हर दुकान पर जाता है और जितना माल बचा होता है, वह तुलवा लेता है और सचमुच के रुपये देता है, बिल्कुल ऐसे ही रुपये।

हामिद को यकीन न आया – ऐसे रुपये जिन्नात को कहाँ से मिल जाएँगे?

मोहसिन ने कहा – जिन्नात को रुपये की क्या कमी? जिस खजाने में चाहें, चले जाएँ। लोहे के दरवाजे तक उन्हें नहीं रोक सकते जनाब, आप हैं किस फेर में! हीरे जवाहरात तक उनके पास रहते हैं। जिससे खुश हो गए, उसे टोकरों जवाहरात दे दिए। अभी यहीं बैठे हैं, पाँच मिनट में कलकत्ता पहुँच जाएँ।

हामिद ने फिर पूछा – जिन्नात बहुत बड़े–बड़े होते होंगे ?

मोहसिन – एक–एक आसमान के बराबर होता है जी। ज़मीन पर खड़ा हो जाए तो उसका सिर आसमान से जा लगे, मगर चाहें तो एक लोटे में घुस जाएँ।

हामिद – लोग उन्हें कैसे खुश करते होंगे? कोई मुझे वह मंतर बता दे तो एक जिन्न को खुश कर लूँ।

मोहसिन – अब यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन चौधरी साहब के काबू में बहुत से जिन्नात हैं। कोई चीज़ चोरी जाए, चौधरी साहब उसका पता लगा देंगे और चोर का नाम भी बता देंगे। जुमराती का बछवा उस दिन खो गया था। तीस दिन हैरान हुए, कहीं न मिला। तब झख मारकर चौधरी के पास गए। चौधरी ने तुरंत बता दिया, मवेशीखाने में है और वहीं मिला। जिन्नात आकर उन्हें सारे जहान की खबरें दे जाते हैं।

अब उसकी समझ में आ गया कि चौधरी के पास क्यों इतना धन है, और क्यों उनका इतना सम्मान है।

आगे चले! यह पुलिस लाइन है। यहीं सब कानिसटिबिल कवायद करते हैं। रैटन! फ़ाय फ़ो! रात को बेचारे घूम–घूमकर पहरा देते हैं, नहीं चोरियाँ हो जाएँ।

मोहसिन ने प्रतिवाद किया – यह कानिसटिबिल पहरा देते हैं। तभी तुम बहुत जानते हो। अजी हजरत, यही चोरी कराते हैं। शहर के जितने चोर–डाकू हैं, सब इनसे मिले रहते हैं। रात को ये लोग चोरों से तो कहते हैं, चोरी करो और आप दूसरे मुहल्ले में जाकर "जागते रहो! जागते रहो!" पुकारते हैं। जभी इन लोगों के पास इतने रुपये आते हैं। मेरे मामूँ एक थाने में कानिसटिबिल हैं। बीस रुपया महीना पाते हैं; लेकिन पचास रुपये घर भेजते हैं। अल्ला कसम! मैंने एक बार पूछा था कि मामूँ आप इतने रुपये कहाँ से पाते हैं ? हँसकर कहने लगे–बेटा, अल्लाह देता है। फिर आप ही बोले–हम लोग चाहें तो एक दिन में लाखों मार लाएँ। हम तो इतना ही लेते हैं, जिसमें अपनी बदनामी न हो और नौकरी न चली जाए।

हामिद ने पूछा – यह लोग चोरी करवाते हैं, तो कोई इन्हें पकड़ता नहीं?

मोहसिन उसकी नादानी पर दया दिखाकर बोला – अरे पागल, इन्हें कौन पकड़ेगा? पकड़ने वाले तो यह लोग खुद हैं; लेकिन अल्लाह इन्हें सज़ा भी खूब देता है। हराम का माल हराम में जाता है। थोड़े ही दिन हुए, मामूँ के घर में आग लग गई। सारी लेई–पूँजी जल गई। एक बरतन तक न बचा। कई दिन पेड़ के नीचे सोए, अल्ला कसम, पेड़ के नीचे! फिर न जाने कहाँ से एक सौ कर्ज लाए तो बरतन–भाँडे आए।

हामिद – एक सौ तो पचास से ज्यादा होते हैं?

'कहाँ पचास, कहाँ एक सौ। पचास एक थैली भर होता है। सौ तो दो थैलियों में भी न आए।'

अब बस्ती घनी होने लगी थी। ईदगाह जानेवालों की टोलियाँ नजर आने लगीं। एक से एक भड़कीले वस्त्र पहने हुए। कोई इक्के–ताँगे पर सवार, कोई मोटर पर, सभी इत्र में बसे, सभी के दिलों में उमंग। ग्रामीणों का यह छोटा–सा दल, अपनी विपन्नता से बेखबर, संतोष और धैर्य में मगन चला जा रहा था। बच्चों के लिए नगर की सभी चीज़ें अनोखी थीं। जिस चीज़ की ओर ताकते, ताकते ही रह जाते और पीछे से बराबर हार्न की आवाज़ होने पर भी न चेतते। हामिद तो मोटर के नीचे जाते–जाते बचा।

सहसा ईदगाह नज़र आया। ऊपर इमली के घने वृक्षों की छाया। नीचे पक्का फर्श है, जिस पर जाजिम बिछा हुआ है। और रोज़ेदारों की पंक्तियाँ एक के पीछे एक न जाने कहाँ तक चली गई हैं, पक्की जगत के नीचे तक, जहाँ जाजिम भी नहीं है। नए आनेवाले आकर पीछे की कतार में खड़े हो जाते हैं। आगे जगह नहीं है। यहाँ कोई धन और पद नहीं देखता। इस्लाम की निगाह में सब बराबर हैं। इन ग्रामीणों ने भी वजू किया और पिछली पंक्ति में खड़े हो गए। कितना सुंदर संचालन है, कितनी सुंदर व्यवस्था! लाखों सिर एक साथ सिजदे में झुक जाते हैं, फिर सब–के–सब एक साथ खड़े हो जाते हैं, एक साथ झुकते हैं, और एक साथ घुटनों के बल बैठ जाते हैं। कई बार यही क्रिया होती है, जैसे बिजली की लाखों बत्तियाँ एक साथ प्रदीप्त हों और एक साथ बुझ जाएँ और यही क्रम चलता रहा। कितना अपूर्व दृश्य था, जिसकी सामूहिक क्रियाएँ, विस्तार और अनंतता हृदय को श्रद्धा, गर्व और आत्मानंद से भर देती थीं, मानो भ्रातृत्व का एक सूत्र इन समस्त आत्माओं को एक लड़ी में पिरोए हुए है।

(2)

नमाज़ खत्म हो गई है। लोग आपस में गले मिल रहे हैं। तब मिठाई और खिलौने की दुकानों पर धावा होता है। ग्रामीणों का यह दल इस विषय में बालकों से कम उत्साही नहीं है। यह देखो, हिंडोला है। एक पैसा देकर चढ़ जाओ। कभी आसमान पर जाते हुए मालूम होंगे, कभी ज़मीन पर गिरते हुए। यह चर्खी है, लकड़ी के हाथी, घोड़े, ऊँट छड़ों से लटके हुए हैं। एक पैसा देकर बैठ जाओ और पच्चीस चक्करों का मज़ा लो! महमूद और मोहसिन और नूरे और सम्मी इन घोड़ों और ऊँटों पर बैठते हैं। हामिद दूर खड़ा है। तीन ही पैसे तो उसके पास हैं। अपने कोष का एक तिहाई ज़रा–सा चक्कर खाने के लिए नहीं दे सकता।

सब चर्खियों से उतरते हैं। अब खिलौने लेंगे। इधर दूकानों की कतार लगी हुई है। तरह–तरह के खिलौने हैं – सिपाही और गुजरिया, राजा और वकील, भिश्ती और साधु! वाह! कितने सुंदर खिलौने हैं। अब बोला ही चाहते हैं। महमूद सिपाही लेता है, खाकी वर्दी और लाल पगड़ीवाला , कंधे पर बंदूक रखे हुए; मालूम होता है अभी कवायद किए चला आ रहा है। मोहसिन को भिश्ती पसंद आया। कमर झुकी हुई है, ऊपर मशक रखे हुए है। मशक का मुँह एक हाथ से पकड़े हुए है। कितना प्रसन्न है। शायद कोई गीत गा रहा है। बस, मशक से पानी उँड़ेला ही चाहता है। नूरे को वकील से प्रेम है। कैसी विद्वता है उसके मुख पर! काला चोगा, नीचे सफ़ेद अचकन, अचकन के सामने की जेब में घड़ी, सुनहरी जंजीर, एक हाथ में कानून का पोथा लिए हुए। मालूम होता है, अभी किसी अदालत से जिरह या बहस किए चले आ रहे हैं। यह सब दो–दो पैसे के खिलौने हैं। हामिद के पास कुल तीन पैसे हैं, इतने महँगे खिलौने वह कैसे ले? खिलौना कहीं हाथ से छूट पड़े, तो चूर–चूर हो जाए, ज़रा पानी पड़े तो सारा रंग धुल जाए, ऐसे खिलौने लेकर वह क्या करेगा, किस काम के?

मोहसिन कहता है – मेरा भिश्ती रोज़ पानी दे जाएगा, साँझ–सवेरे।

महमूद – और मेरा सिपाही घर का पहरा देगा। कोई चोर आएगा, तो फ़ौरन बंदूक फ़ैर कर देगा!

नूरे – और मेरा वकील खूब मुक़दमा लड़ेगा।

हामिद खिलौनों की निंदा करता है – मिट्टी ही के तो हैं, गिरे तो चकनाचूर हो जाएँ ; लेकिन ललचाई हुई आँखों से खिलौनों को देख रहा है। और चाहता है कि ज़रा देर के लिए उन्हें हाथ में ले सकता। उसके हाथ अनायास ही लपकते हैं; लेकिन लड़के इतने त्यागी नहीं होते हैं, विशेषकर जब अभी नया शौक है। हामिद ललचाता रह जाता है।

खिलौने के बाद मिठाइयाँ आती हैं। किसी ने रेवड़ियाँ ली हैं, किसी ने गुलाब–जामुन, किसी ने सोहन हलवा। मज़े से खा रहे हैं। हामिद उनकी बिरादरी से पृथक है। अभागे के पास तीन पैसे हैं। क्यों नहीं कुछ लेकर खाता ? ललचाई आँखों से सबकी ओर देखता है।

मोहसिन कहता है – हामिद, रेवड़ी ले जा, कितनी खुशबूदार है!

हामिद को संदेह हुआ, यह केवल क्रूर विनोद है, मोहसिन इतना उदार नहीं है; लेकिन यह जानकर भी वह उसके पास जाता है। मोहसिन दोने से एक रेवड़ी निकालकर हामिद की ओर बढ़ाता है। हामिद हाथ फैलाता है। मोहसिन रेवड़ी अपने मुँह में रख लेता है। महमूद, नूरे और सम्मी खूब तालियाँ बजा–बजाकर हँसते हैं। हामिद खिसिया जाता है।

मोहसिन – अच्छा, अबकी ज़रुर देंगे हामिद, अल्ला कसम, ले जा।

हामिद – रखे रहो। क्या मेरे पास पैसे नहीं हैं ?

सम्मी – तीन ही पैसे तो हैं। तीन पैसे में क्या–क्या लोगे ?

महमूद – हमसे गुलाब–जामुन ले जाव हामिद। मोहसिन बदमाश है।

हामिद – मिठाई कौन बड़ी नेमत है! किताब में इसकी कितनी बुराइयाँ लिखी हैं।

मोहसिन – लेकिन दिल में कह रहे होंगे कि मिले तो खा लें। अपने पैसे क्यों नहीं निकालते?

महमूद – हम समझते हैं, इसकी चालाकी। जब हमारे सारे पैसे खर्च हो जाएँगे, तो हमें ललचा–ललचाकर खाएगा।

मिठाइयों के बाद कुछ दुकानें लोहे की चीजों की, कुछ गिलट और कुछ नकली गहनों की। लड़कों के लिए यहाँ कोई आकर्षण न था। वह सब आगे बढ़ जाते हैं। हामिद लोहे की दुकान पर रुक जाता है। कई चिमटे रखे हुए थे। उसे खयाल आया, दादी के पास चिमटा नहीं है। तवे से रोटियाँ उतारती हैं, तो हाथ जल जाता है ; अगर वह चिमटा ले जाकर दादी को दे दे, तो वह कितनी प्रसन्न होंगी! फिर उनकी उँगलियाँ कभी न जलेंगी। घर में एक काम की चीज़ हो जाएगी। खिलौने से क्या फ़ायदा। व्यर्थ में पैसे खराब होते हैं। ज़रा देर ही तो खुशी होती है। फिर तो खिलौने को कोई आँख उठाकर नहीं देखता। या तो

घर पहुँचते–पहुँचते टूट–फूटकर बराबर हो जाएँगे, या छोटे बच्चे जो मेले में नहीं आए हैं; जिद्द करके ले लेंगे और तोड़ डालेंगे। चिमटा कितने काम की चीज़ है। रोटियाँ तवे से उतार लो, चूल्हे में सेंक लो। कोई आग माँगने आए तो चटपट चूल्हे से आग निकालकर उसे दे दो। अम्माँ बेचारी को कहाँ फुरसत है कि बाजार आएँ और इतने पैसे ही कहाँ मिलते हैं। रोज़ हाथ जला लेती हैं। हामिद के साथी आगे बढ़ गए हैं। सबील पर सब–के–सब शरबत पी रहे हैं। देखो, सब कितने लालची हैं। इतनी मिठाइयाँ लीं, मुझे किसी ने एक भी न दी। उस पर कहते हैं, मेरे साथ खेलो। मेरा यह काम करो। अब अगर किसी ने कोई काम करने को कहा, तो पूछूँगा। खाएँ मिठाइयाँ, आप मुँह सड़ेगा, फोड़े फुंसियाँ निकलेंगी, आप ही ज़बान चटोरी हो जाएगी। तब घर से पैसे चुराएँगे और मार खाएँगे। किताब में झूठी बातें थोड़े ही लिखी हैं। मेरी ज़बान क्यों खराब होगी। अम्माँ चिमटा देखते ही दौड़कर मेरे हाथ से ले लेंगी और कहेंगी – मेरा बच्चा अम्माँ के लिए चिमटा लाया है! हज़ारों दुआएँ देंगी। फिर पड़ोस की औरतों को दिखाएँगी। सारे गाँव में चर्चा होने लगेगी, हामिद चिमटा लाया है। कितना अच्छा लड़का है। इन लोगों के खिलौनों पर कौन इन्हें दुआएँ देगा ! बड़ों की दुआएँ सीधे अल्लाह के दरबार में पहुँचती हैं और तुरंत सुनी जाती हैं। मेरे पास पैसे नहीं हैं। तभी तो मोहसिन और महमूद यों मिज़ाज दिखाते हैं। मैं भी इन्हें मिज़ाज दिखाऊँगा। खेलें खिलौने और खाएँ मिठाइयाँ। मैं नहीं खेलता खिलौने, किसी का मिज़ाज क्यों सहूँ ? मैं गरीब सही, किसी से कुछ माँगने तो नहीं जाता ? आखिर अब्बाजान कभी–न–कभी आएँगे। अम्माँ भी आएँगी ही। फिर इन लोगों से पूछूँगा, कितने खिलौने लोगे ? एक–एक को टोकरियों खिलौने दूँ और दिखा दूँ कि दोस्तों के साथ इस तरह सलूक किया जाता है। यह नहीं कि एक पैसे की रेवड़ियाँ लीं तो चिढ़ा–चिढ़ाकर खाने लगे। सब–के–सब खूब हँसेंगे कि हामिद ने चिमटा लिया है। हँसें! मेरी बला से! उसने दुकानदार से पूछा – यह चिमटा कितने का है?

दुकानदार ने उसकी ओर देखा और कोई आदमी साथ न देखकर कहा – तुम्हारे काम का नहीं है जी!

'बिकाऊ है क्यों नहीं ?'

'बिकाऊ क्यों नहीं है ? और यहाँ क्यों लाद लाए है ?'

'तो बताते क्यों नहीं, कै पैसे का है ?'

'छह पैसे लगेंगे।'

हामिद का दिल बैठ गया।

'ठीक–ठीक बताओ!'

'ठीक–ठीक पाँच पैसे लगेंगे, लेना हो लो, नहीं चलते बनो।'

हामिद ने कलेजा मज़बूत करके कहा – तीन पैसे लोगे?

यह कहता हुआ वह आगे बढ़ गया कि दुकानदार की घुड़कियाँ न सुने। लेकिन दुकानदार ने घुड़कियाँ नहीं दीं। बुलाकर चिमटा दे दिया। हामिद ने उसे इस तरह कंधे पर

रखा, मानो बंदूक है और शान से अकड़ता हुआ संगियों के पास आया। जरा सुनें, सब–के–सब क्या–क्या आलोचनाएँ करते हैं।

मोहसिन ने हँसकर कहा – यह चिमटा क्यों लाया पगले; इसे क्या करेगा?

हामिद ने चिमटे को ज़मीन पर पटककर कहा – ज़रा अपना भिश्ती ज़मीन पर गिरा दो। सारी पसलियाँ चूर–चूर हो जाएँ बच्चू की।

महमूद बोला – तो यह चिमटा कोई खिलौना है?

हामिद – खिलौना क्यों नहीं है? अभी कंधे पर रखा, बंदूक हो गई। हाथ में ले लिया, फकीरों का चिमटा हो गया। चाहूँ तो इससे मजीरे का काम ले सकता हूँ। एक चिमटा जमा दूँ, तो तुम लोगों के सारे खिलौनों की जान निकल जाए।

तुम्हारे खिलौने कितना ही ज़ोर लगाएँ, वे मेरे चिमटे का बाल भी बाँका नहीं कर सकते। मेरा बहादुर शेर है – चिमटा।

सम्मी ने खँजरी ली थी। प्रभावित होकर बोला – मेरी खँजरी से बदलोगे? दो आने की है।

हामिद ने खँजरी की ओर उपेक्षा से देखा – मेरा चिमटा चाहे तो तुम्हारे खँजरी का पेट फाड़ डाले। बस एक चमड़े की झिल्ली लगा दी, ढब–ढब बोलने लगी। ज़रा–सा पानी लग जाए तो खतम हो जाए। मेरा बहादुर चिमटा आग में, पानी में, तूफान में बराबर डटा खड़ा रहेगा।

चिमटे ने सभी को मोहित कर लिया, लेकिन अब पैसे किसके पास धरे हैं ! फिर मेले से दूर निकल आए हैं। नौ कब के बज गए, धूप तेज हो रही है। घर पहुँचने की जल्दी हो रही है। बाप से ज़िद भी करें, तो चिमटा नहीं मिल सकता है। हामिद है बड़ा चालाक। इसीलिए बदमाश ने अपने पैसे बचा रखे थे।

अब बालकों के दो दल हो गए हैं। मोहसिन, महमूद, सम्मी और नूरे एक तरफ हैं, हामिद अकेला दूसरी तरफ। शास्त्रार्थ हो रहा है। सम्मी तो विधर्मी हो गया। दूसरे पक्ष से जा मिला; लेकिन मोहसिन, महमूद और नूरे भी, हामिद से एक–एक, दो–दो साल बड़े होने पर भी हामिद के आघातों से आतंकित हो उठे हैं। उसके पास न्याय का बल है और नीति की शक्ति। एक ओर मिट्टी है, दूसरी ओर लोहा, जो इस वक्त अपने को फ़ौलाद कह रहा है। वह अजेय है, घातक है। अगर कोई शेर आ जाए, तो मियाँ भिश्ती के छक्के छूट जाएँ, मियाँ सिपाही मिट्टी की बंदूक छोड़कर भागें, वकील साहब की नानी मर जाए, चोगे में मुँह छिपाकर ज़मीन पर लेट जाएँ। मगर यह चिमटा, यह बहादुर, यह रुस्तमे–हिंद लपककर शेर की गरदन पर सवार हो जाएगा और उसकी आँखें निकाल लेगा।

मोहसिन ने एड़ी–चोटी का ज़ोर लगाकर कहा – अच्छा, पानी तो नहीं भर सकता। हामिद ने चिमटे को सीधा खड़ा करके कहा – भिश्ती को एक डाँट बताएगा तो दौड़ा हुआ पानी लाकर उसके द्वार पर छिड़कने लगेगा।

मोहसिन परास्त हो गया; पर महमूद ने कुमुक पहुँचाई – अगर बच्चू पकड़ा जाएँ तो अदालत में बँधे–बँधे फिरेंगे। तब तो वकील साहब के पैरों पड़ेंगे।

हामिद इस प्रबल तर्क का जवाब न दे सका। उसने पूछा – हमें पकड़ने कौन आएगा?

नूरे ने अकड़कर कहा – यह सिपाही बंदूकवाला।

हामिद ने मुँह चिढ़ाकर कहा – यह बेचारे हम बहादुर रुस्तमे–हिंद को पकड़ेंगे! अच्छा लाओ, अभी ज़रा कुश्ती हो जाए। इसकी सूरत देखकर दूर से भागेंगे। पकड़ेंगे क्या बेचारे!

मोहसिन को एक नई चोट सूझ गई – तुम्हारे चिमटे का मुँह रोज आग में जलेगा।

उसने समझा था कि हामिद लाजवाब हो जाएगा; लेकिन यह बात न हुई।

हामिद ने तुरंत जवाब दिया – आग में बहादुर ही कूदते हैं जनाब, तुम्हारे यह वकील, सिपाही और भिश्ती लौंडियों की तरह घर में घुस जाएँगे। आग में कूदना वह काम है, जो यह रुस्तमे–हिंद ही कर सकता है।

महमूद ने एक ज़ोर लगाया – वकील साहब कुर्सी मेज पर बैठेंगे, तुम्हारा चिमटा तो बावर्चीखाने में ज़मीन पर पड़ा रहेगा।

इस तर्क ने सम्मी और नूरे को भी सजीव कर दिया। कितने ठिकाने की बात कही है पट्ठे ने। चिमटा बावर्चीखाने में पड़े रहने के सिवा और क्या कर सकता है ?

हामिद को कोई फड़कता हुआ जवाब न सूझा तो उसने धाँधली शुरु की – मेरा चिमटा बावर्चीखाने में नहीं रहेगा। वकील साहब कुर्सी पर बैठेंगे, तो जाकर उन्हें ज़मीन पर पटक देगा और उनका कानून उनके पेट में डाल देगा।

बात कुछ बनी नहीं। खासी गाली–गलौज थी; कानून को पेट में डालने वाली बात छा गई। ऐसी छा गई कि तीनों सूरमा मुँह ताकते रह गए, मानो कोई धेलचा कनकौआ किसी गंडेवाले कनकौए को काट गया हो। कानून मुँह से बाहर निकालने वाली चीज़ है। उसको पेट के अंदर डाल दिया जाना, बेतुकी–सी बात होने पर भी कुछ नयापन रखती है। हामिद ने मैदान मार लिया। उसका चिमटा रुस्तमे–हिंद है। अब इसमें मोहसिन, महमूद, नूरे, सम्मी किसी को भी आपत्ति नहीं हो सकती।

विजेता को हारने वालों से जो सत्कार मिलना स्वाभाविक है, वह हामिद को भी मिला। औरों ने तीन–तीन, चार–चार आने पैसे खर्च किए, पर कोई काम की चीज़ न ले सके। हामिद

ने तीन पैसे में रंग जमा लिया। सच ही तो है, खिलौनों का क्या भरोसा ? टूट–फूट जाएँगे। हामिद का चिमटा तो बना रहेगा बरसों!

संधि की शर्तें तय होने लगीं। मोहसिन ने कहा – ज़रा अपना चिमटा दो हम भी देखें। तुम हमारा भिश्ती लेकर देखो।

महमूद और नूरे ने भी अपने–अपने खिलौने पेश किए।

हामिद को इन शर्तों के मानने में कोई आपत्ति न थी। चिमटा बारी–बारी से सबके हाथ में गया; और उनके खिलौने बारी–बारी से हामिद के हाथ में आए। कितने ख़ूबसूरत खिलौने हैं!

हामिद ने हारने वालों के आँसू पोंछे – मैं तुम्हें चिढ़ा रहा था, सच! यह चिमटा भला इन खिलौनों की क्या बराबरी करेगा; मालूम होता है, अब बोले, अब बोले।

लेकिन मोहसिन की पार्टी को इस दिलासे से संतोष नहीं होता। चिमटे का सिक्का खूब बैठ गया है। चिपका हुआ टिकट अब पानी से नहीं छूट रहा है।

मोहसिन– लेकिन इन खिलौनों के लिए कोई हमें दुआ तो न देगा।

महमूद– दुआ को लिए फिरते हो। उलटे मार न पड़े । अम्माँ ज़रुर कहेंगी कि मेले में यही मिट्टी के खिलौने तुम्हें मिले?

हामिद को स्वीकार करना पड़ा कि खिलौनों को देखकर किसी की माँ इतनी खुश न होंगी, जितनी दादी चिमटे को देखकर होंगी। तीन पैसों ही में तो उसे सब कुछ करना था और उन पैसों के इस उपयोग पर पछतावे की बिलकुल ज़रुरत न थी। फिर अब तो चिमटा रुस्तमे–हिंद है और सभी खिलौनों का बादशाह!

रास्ते में महमूद को भूख लगी। उसके बाप ने केले खाने को दिए। महमूद ने केवल हामिद को साझी बनाया। उसके अन्य मित्र मुँह ताकते रह गए। यह उस चिमटे का प्रसाद था।

(3)

ग्यारह बजे गाँव में हलचल मच गई। मेलेवाले आ गए। मोहसिन की छोटी बहन ने दौड़कर भिश्ती उसके हाथ से छीन लिया और मारे खुशी के जो उछली, तो मियाँ भिश्ती नीचे आ रहे और सुरलोक सिधारे। इस पर भाई–बहन में मार–पीट हुई। दोनों खूब रोए। उनकी अम्माँ यह शोर सुनकर बिगड़ीं और दोनों को ऊपर से दो–दो चाँटे और लगाए।

मियाँ नूरे के वकील का अंत उनके प्रतिष्ठानुकूल इससे ज्यादा गौरवमय हुआ। वकील ज़मीन पर या ताक पर तो नहीं बैठ सकता। उसकी मर्यादा का विचार तो रखना ही होगा। दीवार में दो खूटियाँ गाड़ी गईं। उन पर लकड़ी का एक पटरा रखा गया। पटरे पर कागज़ का कालीन बिछाया गया। वकील साहब राजा भोज की भाँति सिंहासन पर बिराजे। नूरे ने

उन्हें पंखा झलना शुरू किया। अदालतों में खस की टट्टियाँ और बिजली के पंखे रहते हैं। क्या यहाँ मामूली पंखा भी न हो! कानून की गरमी दिमाग पर चढ़ जाएगी कि नहीं। बाँस का पंखा आया और नूरे हवा करने लगे। मालूम नहीं, पंखे की हवा से, या पंखे की चोट से वकील साहब स्वर्गलोक से मृत्युलोक में आ रहे और उनका माटी का चोला माटी में मिल गया। फिर बड़े ज़ोर–शोर से मातम हुआ और वकील साहब की अस्थि घूरे पर डाल दी गई।

अब रहा महमूद का सिपाही। उसे चटपट गाँव का पहरा देने का चार्ज मिल गया; लेकिन पुलिस का सिपाही कोई साधारण व्यक्ति तो था नहीं, जो अपने पैरों चले। वह पालकी पर चलेगा। एक टोकरी आई, उसमें कुछ लाल रंग के फटे–पुराने चिथड़े बिछाए गए; जिसमें सिपाही साहब आराम से लेटे। नूरे ने यह टोकरी उठाई और अपने द्वार का चक्कर लगाने लगे। उनके दोनों छोटे भाई सिपाही की तरफ़ से 'छोनेवाले, जागते लहो' पुकारते चलते हैं। मगर रात तो अँधेरी होनी चाहिए ; महमूद को ठोकर लग जाती है। टोकरी उसके हाथ से छूटकर गिर पड़ती है और मियाँ सिपाही अपनी बंदूक लिए ज़मीन पर आ जाते हैं और उनकी एक टाँग में विकार आ जाता है। महमूद को आज ज्ञात हुआ कि वह अच्छा डॉक्टर है। उसको ऐसा मरहम मिल गया है जिससे वह टूटी टाँग को आनन–फानन जोड़ सकता है। केवल गूलर का दूध चाहिए। गूलर का दूध आता है। टाँग जोड़ दी जाती है लेकिन सिपाही को ज्यों ही खड़ा किया जाता है, टाँग जवाब दे देती है। शल्यक्रिया असफल हुई, तब उसकी दूसरी टाँग भी तोड़ दी जाती है। अब कम–से–कम एक जगह आराम से बैठ तो सकता है। एक टाँग से तो न चल सकता था; न बैठ सकता था। अब वह सिपाही संन्यासी हो गया है। अपनी जगह पर बैठा–बैठा पहरा देता है। कभी–कभी देवता भी बन जाता है। उसके सिर का झालरदार साफ़ा खुरच दिया गया है। अब उसका जितना रूपांतर चाहो, कर सकते हो। कभी–कभी तो उससे बाट का काम भी लिया जाता है।

अब मियाँ हामिद का हाल सुनिए। अमीना उसकी आवाज सुनते ही दौड़ी और उसे गोद में उठाकर प्यार करने लगी। सहसा उसके हाथ में चिमटा देखकर वह चौंकी।

'यह चिमटा कहाँ था ?'

'मैंने मोल लिया है।'

'कै पैसे में ?'

'तीन पैसे दिए।'

अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया। लाया क्या, चिमटा! सारे मेले में तुझे और कोई चीज़ न मिली, जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया ?

हामिद ने अपराधी–भाव से कहा – तुम्हारी उँगलियाँ तवे से जल जाती थीं; इसलिए मैंने उसे लिया।

बुढ़िया का क्रोध तुरंत स्नेह में बदल गया, और स्नेह भी वह नहीं, जो प्रगल्भ होता है और अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है। यह मूक स्नेह था, खूब ठोस, रस और स्वाद से भरा हुआ। बच्चे में कितना त्याग, कितना सद्भाव और कितना विवेक है! दूसरों को खिलौने लेते और खाते देखकर इसका मन कितना ललचाया होगा! इतना ज़ब्त इससे हुआ कैसे ? वहाँ भी उसे अपनी बुढ़िया दादी की याद बनी रही। अमीना का मन गदगद हो गया।

और अब एक बड़ी विचित्र बात हुई। हामिद के इस चिमटे से भी विचित्र! बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था। बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई। वह रोने लगी । दामन फैलाकर हामिद को दुआएँ देती जाती थी और आँसू की बड़ी–बड़ी बूँदें गिराती जाती थीं। हामिद इसका रहस्य क्या समझता!

कठिन शब्दार्थ

बला – कष्ट, आपत्ति, बहुत कष्ट देने वाली वस्तु
बदहवास – घबराना, होश–हवास ठीक न होना
निगोड़ी – अभागी, जिसका कोई न हो
चितवन – किसी की ओर देखने का ढंग, दृष्टि
वजू – नमाज से पहले यथाविधि हाथ–पाँव और मुँह धोना
सिजदा – माथा टेकना, खुदा के आगे सिर झुकाना
हिंडोला – झूला, पालना
मशक – भेड़ या बकरी की खाल को सीलकर बनाया हुआ थैला जिससे भिश्ती पानी ढोते हैं।
अचकन – लम्बा कलीदार अँगरखा जिसमें गले से कमर–पट्टी तक बटन लगे होते हैं।
नेमत – वरदान
जब्त – सहन करना
दामन – पल्लू, आँचल

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. प्रेमचन्द के पहले कहानी संग्रह का नाम है –

   (क) मानसरोवर (ख) सोजे वतन (ग) निर्मला (घ) माधुरी

2. दुकानदार ने हामिद को पहली बार चिमटे की कीमत बताई थी –

   (क) तीन पैसे (ख) पाँच पैसे (ग) छह पैसे (घ) चार पैसे

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. हामिद की दादी का क्या नाम था?
2. हामिद ने चिमटा कितने पैसे का खरीदा?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. महमूद ने कौनसा खिलौना खरीदा?
4. ईद किस महीने में आती है?
5. 'ईदगाह' किस लेखक की रचना है?
6. हामिद के चरित्र की कोई तीन विशेषताएँ बताइए?
7. हामिद ने चिमटे की उपयोगिता को सिद्ध करते हुए क्या–क्या तर्क दिए?
8. 'ईदगाह' कहानी के उन प्रसंगों का उल्लेख कीजिए, जिनसे ईद के अवसर पर ग्रामीण परिवेश का उल्लास प्रकट होता है?
9. हामिद के अतिरिक्त इस कहानी के किस पात्र ने आपको सर्वाधिक प्रभावित किया है और क्यों?

निबंधात्मक प्रश्न –

10. बच्चों में लालच एवं एक दूसरे से आगे निकल जाने की होड़ के साथ–साथ निश्छलता भी मौजूद होती है। कहानी से कोई दो प्रसंग चुनकर इस मत की पुष्टि कीजिए?
11. मुंशी प्रेमचन्द का जीवन परिचय लिखिए?
12. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

    (क) कितना मनोहर, कितना सुहावना प्रभात है.. ईद की बधाई दे रहा है।

    (ख) कितना अपूर्व दृश्य था.................................... एक लड़ी में पिरोए हुए है।

12
महावीर प्रसाद द्विवेदी
(जन्म : 1864 ई. / मृत्यु : 1938 ई.)

जीवन परिचय –

महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म उत्तरप्रदेश के रायबरेली जिले के दौलतपुर ग्राम में सन् 1864 में हुआ। इनके पिता पं. रामसहाय दुबे कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। पारिवारिक आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण स्कूली शिक्षा पूर्ण कर इन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। लेकिन स्वाभिमानी स्वभाव के धनी द्विवेदी जी ने कुछ समय पश्चात् रेलवे से इस्तीफा दे दिया। आप सन् 1903–1920 तक सरस्वती पत्रिका के संपादन से जुड़े रहे। सन् 1938 ई॰ में महावीरप्रसाद द्विवेदी का निधन हो गया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी प्रखर व्यक्तित्व एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। द्विवेदी जी कवि, समालोचक, निबंधकार, संपादक, भाषा वैज्ञानिक, इतिहासकार अर्थशास्त्री आदि विविध रुपों में उभरकर सामने आये। आपने 1903–1920 तक सरस्वती के संपादक रहते हुए हिन्दी व्याकरण एवं वर्तनी के नियम स्थिर करके हिन्दी गद्य की भाषा का परिष्कार किया। द्विवेदी जी ने अपने समकालीन कवियों एवं लेखकों का साहित्य रचना में मार्गदर्शन किया। इसी कारण आधुनिक हिन्दी साहित्य के द्वितीय उत्थान (सुधार काल) को महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर द्विवेदी युग भी कहा जाता है। इनके प्रयासों से ही खड़ी बोली काव्य की भाषा के रुप में प्रतिष्ठित हुई।

द्विवेदी जी ने भारतीय जातीय परंपरा का समालोचन दृष्टि से गहन अध्ययन किया एवं प्रासंगिक एवं विवेकसम्मत परंपराओं का समर्थन तथा रूढ़ियों का विरोध किया। इनके लेखन में सरलता, सुबोधता, एवं परिनिष्ठता के गुण झलकते हैं।

रचनाएँ –

मौलिक रचनाएँ – काव्य मंजूषा, सुमन, अबला विलाप, कान्यकुब्ज, कविताकलाप (काव्य) अद्भुत आलाप, संपत्तिशास्त्र, महिलामोद, रसज्ञरंजन, साहित्यसीकर (गद्य)

अनूदित रचनाएँ– विनयविनोद, स्नेहमाला, ऋतुतरंगिनी (पद्य) भामिनीविलास, रघुवंश, वेणी संहार, बेकन–विचार रत्नावली, स्वाधीनता (गद्य)।

पाठ परिचय –

प्रस्तुत निबंध द्विवेदी जी के 'महिला मोद' शीर्षक निबंध संग्रह से लिया गया है। यह निबन्ध प्रथम बार सितम्बर 1914 को 'सरस्वती' पत्रिका में 'पढ़े लिखों का पांडित्य' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

21 वीं शताब्दी में स्त्री शिक्षा, विज्ञान, सरकारी सेवा, निजी क्षेत्र, व्यापार एवं वाणिज्य सहित सभी क्षेत्रों में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर समाज निर्माण एवं विकास में अपना योगदान दे रहीं है। लेकिन इस स्थिति में पहुँचने के लिए स्त्री शिक्षा के पक्षधर सुधारकों को पुरुष प्रधान एवं रूढ़िवादी समाज से कड़ा संघर्ष करना पड़ा।

प्रस्तुत निबंध स्त्री शिक्षा को समाज एवं परिवार के विघटन एवं पतन के लिए जिम्मेदार ठहराने वाली दकियानूसी सोच को अकाट्य तर्कों द्वारा सिरे से खारिज करता है। साथ ही इसमें इन दकियानूसी एवं अप्रसांगिक परम्पराओं के अंधानुकरण के बजाय विवेक सम्मत एवं तर्कपूर्ण परंपराओं को ही ग्रहण करने की बात कही गई है। इसकी भाषा शैली हिन्दी के द्विवेदी युगीन गद्य की एक बानगी प्रस्तुत करती है।

स्त्री-शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खंडन

बड़े शोक की बात है, आजकल भी ऐसे लोग विद्यमान हैं जो स्त्रियों को पढ़ाना उनके और गृह–सुख के नाश का कारण समझते हैं। और, लोग भी ऐसे–वैसे नहीं, सुशिक्षित लोग–ऐसे लोग जिन्होंने बड़े–बड़े स्कूलों और शायद कॉलिजों में भी शिक्षा पाई है, जो धर्म–शास्त्र और संस्कृत के ग्रंथ साहित्य से परिचय रखते हैं, और जिनका पेशा कुशिक्षितों को सुशिक्षित करना, कुमार्गगामियों को सुमार्गगामी बनाना और अधार्मिकों को धर्मतत्त्व समझाना है। उनकी दलीलें सुन लीजिए–

1. पुराने संस्कृत–कवियों के नाटकों में कुलीन स्त्रियों से अपढ़ों की भाषा में बातें कराई गई हैं। इससे प्रमाणित है कि इस देश में स्त्रियों को पढ़ाने की चाल न थी। होती तो इतिहास–पुराणादि में उनको पढ़ाने की नियमबद्ध प्रणाली जरुर लिखी मिलती।
2. स्त्रियों को पढ़ाने से अनर्थ होते हैं। शकुंतला इतना कम पढ़ी थी कि गँवारों की भाषा में मुश्किल से एक छोटा–सा श्लोक वह लिख सकी थी। तिस पर भी उसकी इस इतनी कम शिक्षा ने भी अनर्थ कर डाला। शकुंतला ने जो कटु वाक्य दुष्यंत को कहे, वह इस पढ़ाई का ही दुष्परिणाम था।
3. जिस भाषा में शकुंतला ने श्लोक रचा था वह अपढ़ों की भाषा थी। अतएव नागरिकों की भाषा की बात तो दूर रही, अपढ़ गँवारों की भी भाषा पढ़ाना स्त्रियों को बरबाद करना हैं।

इस तरह की दलीलों का सबसे अधिक प्रभावशाली उत्तर उपेक्षा ही है। तथापि हम दो–चार बातें लिखे देते हैं।

नाटकों में स्त्रियों का प्राकृत बोलना उनके अपढ़ होने का प्रमाण नहीं। अधिक से अधिक इतना ही कहा जा सकता है कि वे संस्कृत न बोल सकती थीं। संस्कृत न बोल सकना न अपढ़ होने का सबूत है और न गँवार होने का । अच्छा तो उत्तररामचरित में ऋषियों की वेदांतवादिनी पत्नियाँ कौन–सी भाषा बोलती थीं ? उनकी संस्कृत क्या कोई गँवारी संस्कृत थी ? भवभूति और कालिदास आदि के नाटक जिस जमाने के हैं उस जमाने में शिक्षितों का समस्त समुदाय संस्कृत ही बोलता था, इसका प्रमाण पहले कोई दे ले तब प्राकृत बोलने वाली स्त्रियों को अपढ़ बताने का साहस करे। इसका क्या सबूत कि उस जमाने में बोलचाल की भाषा प्राकृत न थी ? सबूत तो प्राकृत के चलन के ही मिलते हैं। प्राकृत यदि उस समय की प्रचलित भाषा न होती तो बौद्धों तथा जैनों के हजारों ग्रंथ उसमें क्यों लिखे जाते, और भगवान शाक्य मुनि तथा उनके चेले प्राकृत ही में क्यों उपदेश देते ? बौद्धों के त्रिपिटक ग्रंथ की रचना प्राकृत में किए जाने का एकमात्र कारण यही है कि उस जमाने में प्राकृत ही सर्वसाधारण की भाषा थी। अतएव प्राकृत बोलना और लिखना अपढ़ और अशिक्षित होने का चिह्न नहीं। जिन पंडितों ने गाथा–सप्तशती, सेतुबंध–महाकाव्य और कुमारपालचरित आदि ग्रंथ प्राकृत में बनाए हैं, वे यदि अपढ़ और गँवार थे तो हिंदी के प्रसिद्ध से भी प्रसिद्ध अखबार का संपादक इस जमाने में अपढ़ और गँवार कहा जा सकता है ; क्योंकि वह अपने जमाने की प्रचलित भाषा में अखबार लिखता है। हिंदी, बाँगला आदि भाषाएँ आजकल की प्राकृत हैं, शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री और पाली आदि भाषाएँ उस जमाने की थीं। प्राकृत पढ़कर भी उस जमाने में लोग उसी तरह सभ्य, शिक्षित और पंडित हो सकते थे जिस तरह कि हिंदी, बाँगला, मराठी आदि भाषाएँ पढ़कर इस जमाने में हम हो सकते हैं। फिर प्राकृत बोलना अपढ़ होने का सबूत है, यह बात कैसे मानी जा सकती है ?

जिस समय आचार्यों ने नाट्यशास्त्र–संबंधी नियम बनाए थे उस समय सर्वसाधारण की भाषा संस्कृत न थी। चुने हुए लोग ही संस्कृत बोलते या बोल सकते थे। इसी से उन्होंने उनकी भाषा संस्कृत और दूसरे लोगों तथा स्त्रियों की भाषा प्राकृत रखने का नियम कर दिया।

पुराने जमाने में स्त्रियों के लिए कोई विश्वविद्यालय न था। फिर नियमबद्ध प्रणाली का उल्लेख आदि पुराणों में न मिले तो क्या आश्चर्य। और, उल्लेख उसका कहीं रहा हो, पर नष्ट हो गया हो तो ? पुराने जमाने में विमान उड़ते थे। बताइए उनके बनाने की विद्या सिखाने वाला कोई शास्त्र! बड़े–बड़े जहाज़ों पर सवार होकर लोग द्वीपांतरों को जाते थे। दिखाइए, जहाज बनाने की नियमबद्ध प्रणाली के दर्शक ग्रंथ ! पुराणादि में विमानों और जहाज़ों द्वारा की गई यात्राओं के हवाले देखकर उनका अस्तित्व तो हम बड़े गर्व से स्वीकार करते हैं, परंतु पुराने ग्रंथों में अनेक प्रगल्भ पंडिताओं के नामोल्लेख देखकर भी कुछ लोग भारत की तत्कालीन स्त्रियों को मूर्ख, अपढ़ और गँवार बताते हैं! इस तर्कशास्त्रज्ञता और इस

न्यायशीलता की बलिहारी! वेदों को प्रायः सभी हिंदू ईश्वर–कृत मानते हैं। सो ईश्वर तो वेद–मंत्रों की रचना अथवा उनका दर्शन विश्ववरा आदि स्त्रियों से करावे और हम उन्हें ककहरा पढ़ाना भी पाप समझें। शीला और विज्जा आदि कौन थीं ? वे स्त्री थीं या नहीं ? बड़े–बड़े पुरुष–कवियों से आदृत हुई हैं या नहीं ? शार्ङगधर–पद्धति में उनकी कविता के नमूने हैं या नहीं ? बौद्ध–ग्रंथ त्रिपिटक के अंतर्गत थेरीगाथा में जिन सैकड़ों स्त्रियों की पद्य–रचना उद्धृत है वे क्या अपढ़ थीं ? जिस भारत में कुमारिकाओं को चित्र बनाने, नाचने, गाने, बजाने, फूल चुनने, हार गूँथने, पैर मलने तक की कला सीखने की आज्ञा थी उनको लिखने–पढ़ने की आज्ञा न थी। कौन विज्ञ ऐसी बात मुख से निकालेगा ? और, कोई निकाले भी तो मानेगा कौन?

अत्रि की पत्नी पत्नी–धर्म पर व्याख्यान देते समय घंटों पांडित्य प्रकट करे, गार्गी बड़े–बड़े ब्रह्मवादियों को हरा दे, मंडन मिश्र की सहधर्मचारिणी शंकराचार्य के छक्के छुड़ा दे! गज़ब! इससे अधिक भयंकर बात और क्या हो सकेगी! यह सब पापी पढ़ने का अपराध है। न वे पढ़तीं, न वे पूजनीय पुरुषों का मुकाबला करतीं। यह सारा दुराचार स्त्रियों को पढ़ाने ही का कुफल है। समझे। स्त्रियों के लिए पढ़ना कालकूट और पुरुषों के लिए पीयूष का घूँट! ऐसी ही दलीलों और दृष्टांतों के आधार पर कुछ लोग स्त्रियों को अपढ़ रखकर भारतवर्ष का गौरव बढ़ाना चाहते हैं।

मान लीजिए कि पुराने ज़माने में भारत की एक भी स्त्री पढ़ी–लिखी न थी। न सही। उस समय स्त्रियों को पढ़ाने की ज़रुरत न समझी गई होगी। पर अब तो है। अतएव पढ़ाना चाहिए। हमने सैकड़ों पुराने नियमों, आदेशों और प्रणालियों को तोड़ दिया है या नहीं ? तो, चलिए, स्त्रियों को अपढ़ रखने की इस पुरानी चाल को भी तोड़ दें। हमारी प्रार्थना तो यह है कि स्त्री–शिक्षा के विपक्षियों को क्षणभर के लिए भी इस कल्पना को अपने मन में स्थान न देना चाहिए कि पुराने ज़माने में यहाँ की सारी स्त्रियाँ अपढ़ थीं अथवा उन्हें पढ़ने की आज्ञा न थी। जो लोग पुराणों में पढ़ी–लिखी स्त्रियों के हवाले माँगते हैं उन्हें श्रीमद्भागवत, दशमस्कंध, के उत्तरार्द्ध का त्रेपनवाँ अध्याय पढ़ना चाहिए। उसमें रुक्मिणी–हरण की कथा है। रुक्मिणी ने जो एक लंबा–चौड़ा पत्र एकांत में लिखकर, एक ब्राह्मण के हाथ, श्रीकृष्ण को भेजा था वह तो प्राकृत में न था। उसके प्राकृत में होने का उल्लेख भागवत में तो नहीं। उसमें रुक्मिणी ने जो पांडित्य दिखाया है वह उसके अपढ़ और अल्पज्ञ होने अथवा गँवारपन का सूचक नहीं। पुराने ढ़ंग के पक्के सनातन–धर्मावलंबियों की दृष्टि में तो नाटकों की अपेक्षा भागवत का महत्त्व बहुत ही अधिक होना चाहिए। इस दशा में यदि उनमें से कोई यह कहे कि सभी प्राक्कालीन स्त्रियाँ अपढ़ होती थीं तो उसकी बात पर विश्वास करने की जरुरत नहीं। भागवत की बात यदि पुराणकार या कवि की कल्पना मानी जाए तो नाटकों की बात उससे भी गई–बीती समझी जानी चाहिए।

स्त्रियों का किया हुआ अनर्थ यदि पढ़ाने ही का परिणाम है तो पुरुषों का किया हुआ अनर्थ भी उनकी विद्या और शिक्षा ही का परिणाम समझना चाहिए। बम के गोले फेंकना,

नरहत्या करना, डाके डालना, चोरियाँ करना, घूस लेना–ये सब यदि पढ़ने–लिखने ही का परिणाम हो तो सारे कॉलिज, स्कूल और पाठशालाएँ बंद हो जानी चाहिए। परंतु विक्षिप्तों, बातव्यथितों और ग्रहग्रस्तों के सिवा ऐसी दलीलें पेश करने वाले बहुत ही कम मिलेंगे। शकुंतला ने दुष्यंत को कटु वाक्य कहकर कौन–सी अस्वाभाविकता दिखाई ? क्या वह यह कहती कि–"आर्य पुत्र, शाबाश! बड़ा अच्छा काम किया जो मेरे साथ गांधर्व–विवाह करके मुकर गए। नीति, न्याय, सदाचार और धर्म की आप प्रत्यक्ष मूर्ति हैं!" पत्नी पर घोर से घोर अत्याचार करके जो उससे ऐसी आशा रखते हैं वे मनुष्य–स्वभाव का किंचित् भी ज्ञान नहीं रखते। सीता से अधिक साध्वी स्त्री नहीं सुनी गई। जिस कवि ने, शकुंतला नाटक में, अपमानित हुई शकुंतला से दुष्यंत के विषय में दुर्वाक्य कहाया है उसी ने परित्यक्त होने पर सीता से रामचंद्र के विषय में क्या कहाया है, सुनिए –

वाच्यस्त्वया मद्वचनात् स राजा–
वह्नौ विशुद्धामति यत्समक्षम्।
मां लोकवाद श्रवणादहासीः
श्रुतस्य तत्किंव सदृशं कुलस्य?

लक्ष्मण! जरा उस राजा से कह देना कि मैंने तो तुम्हारी आँख के सामने ही आग में कूदकर अपनी विशुद्धता साबित कर दी थी। तिस पर भी, लोगों के मुख से निकला मिथ्यावाद सुनकर ही तुमने मुझे छोड़ दिया। क्या यह बात तुम्हारे कुल के अनुरुप हैं ? अथवा क्या यह तुम्हारी विद्वता या महत्ता को शोभा देने वाली है?

सीता का यह संदेश कटु नहीं तो क्या मीठा है? 'राजा' मात्र कहकर उनके पास अपना संदेसा भेजा। यह उक्ति न किसी गँवार स्त्री की ; किंतु महाब्रह्मज्ञानी राजा जनक की लड़की और मन्वादि महर्षियों के धर्मशास्त्रों का ज्ञान रखने वाली रानी को –

नृपस्य वर्णाश्रमपालनं यत्
स एव धर्मो मनुना प्रणीतः

सीता की धर्मशास्त्रज्ञता का यह प्रमाण, वहीं, आगे चलकर, कुछ ही दूर पर, कवि ने दिया है। सीता–परित्याग के कारण वाल्मीकि के समान शांत, नीतिज्ञ और क्षमाशील तपस्वी तक ने – **"अस्त्येव मन्युर्भरताग्रजे मे"** – कहकर रामचंद्र पर क्रोध प्रकट किया है। अतएव, शकुंतला की तरह, अपने परित्याग को अन्याय समझने वाली सीता का रामचंद्र के विषय में, कटुवाक्य कहना सर्वथा स्वाभाविक है। न यह पढ़ने–लिखने का परिणाम है न गँवारपन का, न अकुलीनता का।

पढ़ने–लिखने में स्वयं कोई बात ऐसी नहीं जिससे अनर्थ हो सके। अनर्थ का बीज उसमें हरगिज़ नहीं। अनर्थ पुरुषों से भी होते हैं। अपढ़ों और पढ़े–लिखों, दोनों से। अनर्थ, दुराचार और पापाचार के कारण और ही होते हैं और वे व्यक्ति–विशेष का चाल–चलन देखकर जाने भी जा सकते हैं। अतएव स्त्रियों को अवश्य पढ़ाना चाहिए।

जो लोग यह कहते हैं कि पुराने जमाने में यहाँ स्त्रियाँ न पढ़ती थीं अथवा उन्हें पढ़ने की मुमानियत थी वे या तो इतिहास से अभिज्ञता नहीं रखते या जान–बूझकर लोगों को धोखा देते हैं। समाज की दृष्टि में ऐसे लोग दंडनीय हैं। क्योंकि स्त्रियों को निरक्षर रखने का उपदेश देना समाज का अपकार और अपराध करना है – समाज की उन्नति में बाधा डालना है।

'शिक्षा' बहुत व्यापक शब्द है। उसमें सीखने योग्य अनेक विषयों का समावेश हो सकता है। पढ़ना–लिखना भी उसी के अंतर्गत है। इस देश की वर्तमान शिक्षा–प्रणाली अच्छी नहीं। इस कारण यदि कोई स्त्रियों को पढ़ाना अनर्थकारी समझे तो उसे उस प्रणाली का संशोधन करना या कराना चाहिए, खुद पढ़ने–लिखने को दोष न देना चाहिए। लड़कों ही की शिक्षा–प्रणाली कौन–सी बड़ी अच्छी है। प्रणाली बुरी होने के कारण क्या किसी ने यह राय दी है कि सारे स्कूल और कॉलिज बंद कर दिए जाएँ? आप खुशी से लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा की प्रणाली का संशोधन कीजिए। उन्हें क्या पढ़ाना चाहिए, कितना पढ़ाना चाहिए, किस तरह की शिक्षा देना चाहिए और कहाँ पर देना चाहिए–घर में या स्कूल में– इन सब बातों पर बहस कीजिए, विचार कीजिए, जी में आवे सो कीजिए; पर परमेश्वर के लिए यह न कहिए कि स्वयं पढ़ने–लिखने में कोई दोष है – वह अनर्थकर है, वह अभिमान का उत्पादक है, वह गृह–सुख का नाश करने वाला है। ऐसा कहना सोलहों आनें मिथ्या है।

कठिन शब्दार्थ

दलीलें	–	तर्क
अपढ़ों	–	अनपढ़ों, निरक्षर
वेदांतवादिनी	–	वेदांत दर्शन पर बोलने वाली
दर्शक ग्रंथ	–	जानकारी देने वाली पुस्तक
तर्कशास्त्रज्ञता	–	तर्कशास्त्र को जानना
खंडन	–	दूसरे के मत का युक्तिपूर्वक निराकरण करना
प्रगल्भ	–	प्रतिभावान
नामोल्लेख	–	नाम का उल्लेख करना
आदृत	–	आदर पाया, सम्मानित
विज्ञ	–	जानकार, विद्वान
ब्रह्मवादी	–	वेद पढ़ने–पढ़ाने वाला

दुराचार	–	बुरा आचरण
सह धर्मचारिणी	–	पत्नी
कालकूट	–	जहर
पीयूष	–	अमृत
दृष्टांत	–	उदाहरण
अल्पज्ञ	–	थोड़ा जानने वाला
प्राक्कालीन	–	प्राचीन समय की, पुरानी
व्याभिचार	–	कुत्सित आचरण
विक्षिप्त	–	पागल
बात व्यथित	–	बातों से दुखी होने वाले।
ग्रह ग्रस्त	–	पाप ग्रह से प्रभावित।
किंचित्	–	थोड़ा
दुर्वाक्य	–	निंदा करने वाला वाक्य
परित्यक्त	–	पूरे तौर पर छोड़ा हुआ, परित्याग किया हुआ
मिथ्यावाद	–	झूठी बात।
कलंकारोपण	–	दोष मढ़ना।
निर्भर्त्सना	–	तिरस्कार, निंदा।
नीतिज्ञ	–	नीति जानने वाला।
मुमानियत	–	रोक, मनाही
अभिज्ञता	–	जानकारी, ज्ञान
अपकार	–	अहित।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किस पत्रिका का सम्पादन किया –
   (क) माधुरी (ख) जागरण (ग) कविवचन सुधा (घ) सरस्वती
2. शकुन्तला ने किस भाषा में श्लोक कहा?
   (क) अपभ्रंश (ख) प्राकृत (ग) शौरसेनी (घ) पाली

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. बौद्ध धर्म के त्रिपिटक ग्रंथ की भाषा क्या है?
4. रुक्मिणी–हरण की कथा कहाँ मिलती है?
5. पाठ में आये प्राचीनकालीन विदुषी महिलाओं के नाम लिखिए।
6. शकुंतला ने दुष्यंत के विषय में दुर्वाक्य क्यों कहे?
7. नाट्यशास्त्र संबंधी नियमों में स्त्री पात्रों के लिए कौन–सी भाषा निर्धारित की गई है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. "नाटकों में स्त्रियों द्वारा प्राकृत बोलना उनके अपढ़ होने का प्रमाण नहीं हैं!" स्पष्ट कीजिए।
9. "यह सारा दुराचार स्त्रियों के पढ़ाने का ही कुफल है।" पंक्ति में निहित व्यंग्य को स्पष्ट कीजिए।
10. द्विवेदी जी ने स्त्री शिक्षा के समर्थन में कौन–कौन से तर्क दिए है ?

निबंधात्मक प्रश्न –

11. महावीर प्रसाद द्विवेदी का यह निबंध उनकी दूरगामी और खुली सोच का परिचायक है। स्पष्ट कीजिए।
12. "स्त्री शिक्षा समाज के पतन का कारण नहीं वरन् समाज के विकास की सीढ़ी है" – इस कथन के आलोक में स्त्री शिक्षा पर अपने विचार लिखिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

    (क) पुराणादि में विमानों और जहाजों द्वारा .... इस तर्कशास्त्रज्ञता और इस न्यायशीलता की बलिहारी।

    (ख) 'शिक्षा' बहुत व्यापक शब्द है...खुद पढ़ने–लिखने को दोष न देना चाहिए।

13
लक्ष्मीनारायण रंगा
(जन्म : 1934 ई.)

जीवन परिचय –

लक्ष्मीनारायण रंगा का जन्म 4 फरवरी 1934 को बीकानेर में हुआ। आपने डूंगर कॉलेज बीकानेर से स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की एवं भाषा विभाग जयपुर में मुख्य अनुवादक के रुप में कार्यरत रहे। बाल्यकाल से ही आपका रुझान नाटकों की ओर था। अतः नाटक लेखन, निर्देशन एवं अभिनय में सक्रिय भागीदारी निभाई।

रंगा जी हिंदी एवं राजस्थानी दोनों भाषाओं में समान अधिकार से साहित्य सृजन करते रहे हैं। आपके नाटक एवं एकांकी मुख्यतः ऐतिहासिक, सामाजिक एवं समसामयिक विषयों को आधार बनाकर लिखे गये हैं। इनके द्वारा रचित नाटक एवं एकांकी अभिनय एवं रंगमंच की दृष्टि से बेहद सफल रहे हैं। इनको सन् 2006 में राजस्थानी भाषा में रचित 'पूर्णमिदं' (रंग नाटक) पर साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ।

रचनाएँ –

नाटक एवं एकांकी संग्रह – टूटती नालन्दाएँ, रक्तबीज, तोड़ दो ये जंजीरें, एक घर अपना

कहानी संग्रह – दहेज का दान, हम नहीं बचेंगे, हम नहीं छोड़ेंगे,

कविता संग्रह – हरिया सूवटिया (राजस्थानी भाषा में)

बाल कहानियाँ – टमरकटूं (राजस्थानी भाषा में)

पाठ परिचय –

इस एकांकी में राजस्थान में स्वतंत्रता आंदोलन के प्रेरणास्त्रोत वीरशिरोमणि सागरमल गोपा द्वारा मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए प्राण न्योछावर करने की यशोगाथा है। सागरमल गोपा ने जैसलमेर राज्य के स्वेच्छाचारी शासन, अत्याचारी एवं निरंकुश सामंतशाही के विरुद्ध क्रांति का बिगुल बजाया। इससे क्रोधित हो सत्ताधारी वर्ग ने उन्हें बंदी बना लिया। बंदीगृह में उन्हें अमानवीय यातनाएँ दी गईं। लेकिन आपने आततायी शासन के सामने झुककर माफ़ीनामा पर दस्तखत करने से मना कर दिया। अंतः में इन्हें 3 अप्रेल 1946 को जेल में ही जिंदा जला दिया गया। आपकी शहादत ने राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम में नये प्राण फूँक दिए।

तात्विक दृष्टि से 'अमर शहीद' एक सफल एकांकी है। इसकी संवाद योजना में ओजपूर्ण भाषा शैली का प्रयोग पाठकों का ध्यान आकृष्ट करती है।

अमर शहीद

पात्र परिचय -

सागरमल गोपा – 46 वर्षीय स्वतंत्रता सेनानी, धोती–कुर्ता पहिने, हाथ में हथकड़ियाँ, पाँवों में दोहरी बेड़ियाँ

गुमानसिंह रावलोत – पुलिस अधीक्षक

जेलर करणीदान – जैसलमेर जेल का इंचार्ज।

बीरबल मुनकासोहिल, अहमदकलर, सिपाही आदि।

(3 अप्रैल 1946, दोपहर का समय)

(पर्दा उठाने पर जेल की कोठरी का आंतरिक भाग दिखाई देता है। सामने की दीवार में लोहे का दरवाजा खुला है। रंगमंच के बीच सागरमल गोपा बैठा है। उसके हाथ पीछे करके उल्टी हथकड़ी लगाई हुई है तथा पाँवों में भारी बेड़ियाँ। बेड़ियों के कारण उनके पाँवों में घाव पड़ गए हैं तथा उनसे खून बह रहा हैं। सागरमल गोपा ने धोती कुर्ता पहन रखे हैं, जो मैले कुचैले हैं। बेंतों से बार–बार पीटने से कपड़े जगह–जगह से फटे हुए हैं तथा उन पर खून के दाग लगे हुए हैं। सागर के चेहरे पर गहरी वेदना के चिह्न हैं। वह हिलता है तो दर्द से हल्की चीख निकल जाती है। वह दाँत भींचकर दर्द को दबाने की कोशिश करता है। पर नीचे के अंगों में मिर्ची की लुगदी चढ़ाई होने के कारण उसके थोड़े हिलते ही तेज चीख बरबस निकल जाती है। पीछे के दरवाजे में गुमानसिंह रावलोत खूनी भेड़िये की–सी नजर और मुस्कान लिए खड़ा नजर आता है।)

सागर – (चीखकर) नहीं.... नहीं.... नहीं...... यह पीड़ा...... यह अपमान..... यह आग अब. ....नहीं सही जाती......

गुमान – (हँसकर) नहीं सही जाती तो महारावल जवाहरसिंहजी से माफी माँग लो.....

सागर – माफी! किस बात की माफी? कौन से अपराध के लिए माफी?

गुमान – सागर, अगर एक अपराध हो तो बताऊँ? राजद्रोह करके तुमने तो जैसलमेर की नाक कटवा दी।

सागर – राष्ट्रप्रेम करके नाक ऊँची करवा दी गुमानसिंह.... सारे देश में, सारी दुनिया में.....

गुमान – लानत है तेरी इस नाक पर! महारावल की जगह यदि मैं होता तो राजद्रोह में तेरी बोटी–बोटी नुचवा देता।

सागर – पर क्यों?

गुमान – इसलिए कि तुमने अन्नदाता के साथ गद्दारी की। तुमने 'जैसलमेर राज्य का गुंडा शासन' और 'रघुनाथ सिंह का मुकदमा' किताबें लिखी। महारावल को डाकू, खूनी, हिंसक और आततायियों का रक्षक कहा। इस राज्य को जंगल का राज्य कहा।

सागर – अपने कलेजे पर हाथ रखकर सोच, गुमानसिंह! क्या मैंने यह गलत कहा है?

गुमान – बिल्कुल गलत! अरे नमक हराम! तेरी पीढ़ियों ने जिस भाटी महारावल का नमक खाया है, तूने उसी थाली में छेद किया। गद्दार।

सागर – (गुस्से से) गद्दार मैं नहीं, गद्दार तुम और तुम्हारे महारावल दोनों हो, जो अंग्रेजों की छत्रछाया पाने के लिए मातृभूमि के साथ गद्दारी कर रहे हो–जनता को डंडे और अंधे कानून से दबाते हो। मैंने जो भी किया जनता के हित में किया।

गुमान – (गुस्से से) झूठे! क्या तुमने राज्य की जनता को नहीं उकसाया? क्या तुम लोगों ने ताजियों का झगड़ा नहीं भड़काया ? क्या तुम लोगों ने दर्जी सत्याग्रह नहीं कराया? क्या तुमने हड़तालें और भूख हड़तालें नहीं कराई? क्या तुमने क्रांतिकारी कविताएँ नहीं लिखीं? क्या तुमने जैसलमेर के किले पर तिरंगा झंडा लहराने की घोषणा नहीं की? क्या तुम लोगों ने नहीं कहा कि महारावल को नजराना भेंट नहीं करेंगे? क्या तुम लोगों ने संकल्प नहीं किया कि महारावल के सामने सिर नहीं झुकाएँगे? बोल..... बोल..... तुम लोगों ने यह सब किया या नहीं

सागर – किया–किया–किया सौ बार किया और हजार बार करुँगा...... मेरे जीवन का ध्येय ही है जैसलमेर की प्रजा को जाग्रत कर सामंती अत्याचारों को नष्ट करना। इसके लिए मैं प्राणों की बाजी तक लगा देना चाहता हूँ।

गुमान – (गुस्से से) और तेरे जैसे पीवणे सँपोलिये को मैं पाँवों से कुचल देना चाहता हूँ.......

सागर – गुमानसिंह ! तुम्हारे 'डायर' और 'ओ डायर' मेरी आवाज दबा नहीं सकते! तुम्हारा महारावल और सामन्त–मंडल मेरी आवाज से हिल उठेगा। मेरी आवाज में वो आग है, जो तुम्हारी राक्षसी–सामंती व्यवस्था को श्मशान बना देगी। तुम्हारी मौत का पैगाम बन जाएगी। मेरे साँसों की एक फूँक से तुम्हारा जुर्म का राज्य ताश के महल की तरह ढह जाएगा.....

गुमान – (चीखकर) ओह, चुपकर कमीने! यह सामंती व्यवस्था तो श्मशान बनेगी या नहीं, मेरी मौत का पैगाम आएगा या नहीं पर तेरी मौत तेरे सिर पर अवश्य मँडरा रही है। ठहर, अभी बताता हूँ–(जोर से पुकारकर) बीरबल, मुनकासोहिल–अहमदकलर ! (बाहर से तीनों की आवाज)

तीनों – (एक साथ) हुक्म रावलोतजी !

गुमान – सिपाहियों से कह दो कि इस आजादी के कुत्ते को थप्पड़ें, लातें, घूँसे, लाठी और बूटों की ठोकरे मारें। मार–मार कर इसका कचूमर निकाल दें।

बीरबल – (बाहर से ही) चलो सिपाहियो! निकाल लो अपने हाथ–पाँवों के वट ! (सिपाही आते हैं। कोई थप्पड़ मारता है, कोई बूट की ठोकर। कोई पीठ पर घूँसा मारता है, कोई लाठी मारता है। सागर–'हाय–हाय' करता है–थोड़ी देर यह मारपीट चलती है। फिर वे सागरमल को जमीन पर गिरा देते हैं। उसके पाँवों पर सिपाही खड़े हो जाते हैं। वह जोर से चीखता है। गुमानसिंह व सिपाही जोर से हँसते हैं। सागरमल तड़पकर बेहोश हो जाता है।)

गुमान – फेंक दो इस जिंदा लाश को। (सिपाही बेहोश सागरमल को घसीटकर रंगमंच के एक तरफ डाल देते हैं–इसी समय जेलर दरवाजे में से आता है। वह सागर की ओर ध्यान से देखता है।)

गुमान – अभी मरा नहीं है जेलर साहब! अभी तो इसे तड़प–तड़प कर मरना है। वो सजा दूँगा कि यह........

जेलर – (बीच में बात काटकर) वो तो ठीक है गुमानसिंहजी! पर सभी को एक ही लाठी से नहीं हाँका जा सकता। ये स्वतंत्रता के दीवाने सर कटा लेंगे, पर झुकाएँगे नहीं। इनसे तो नीति से काम लेना चाहिए ताकि साँप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।

गुमान – (असमंजस में) आपकी बात समझा नहीं।

जेलर – कोई बात नहीं। समय आने पर मैं समझा दूँगा! अब आप जाइये। मुझे सागर को होश में लाकर जरुरी बात करनी है।

गुमान – (जाते–जाते) मेरी जरूरत पड़े तो बुला लें।

जेलर – जरूर और हाँ (गुमानसिंह जाते–जाते रुक जाता हैं) थोड़ा ठंडा पानी भिजवा दीजिये।

गुमान – (जाते हुए) ठीक।

(जेलर सागरमल की हथकड़ी खोलकर उसे सीधा करता है। उसकी नब्ज देखता है। एक सिपाही गिलास और लोटे में पानी लाता है। जेलर सागरमल के मुँह पर दो–तीन बार पानी के छींटे देता है। धीरे–धीरे

कराहता हुआ सागरमल होश में आता है। जेलर उसे सहारा देकर बैठाता है और पानी पिलाता है।)

जेलर – (सहानुभूति से) सागरमल.... सागर

सागर – (कराहते हुए) जी....

जेलर – सागर, अपने पर, अपनी इस जान पर रहम खा..... तेरी यह हालत मुझसे देखी नहीं जाती..... ओह, क्या दशा हो गई है तेरी...... ?

सागर – धन्यवाद जेलर साहब पर स्वतंत्रता के दीवानों को सहानुभूति की भीख नहीं चाहिए।

जेलर – तो तुम क्या चाहते हो?

सागर – (दु:ख भरी मुस्कान से) हमें चाहिए स्वतंत्रता...... सिर्फ स्वतंत्रता......

जेलर – (प्रसन्न होकर) वही तो मैं कहता हूँ....... तुम स्वतंत्र हो सकते हो...... मैं तुम्हें स्वतंत्र करा सकता हूँ........

सागर – (बात समझकर) मुझे मेरी स्वतंत्रता नहीं, भारत माता की स्वतंत्रता चाहिए।

जेलर – तेरी भारत माता तो स्वतंत्र हो या नहीं? पर तेरी साँसों का सूर्य जरुर अस्त हो जाएगा।

सागर – (उठने का प्रयास करता है, जेलर सहारा देकर खड़ा करता है) इस स्वतंत्रता के लिए प्राणों के हजारों सूर्य भी अस्त करने पड़े तो मैं हर जीवन में ऐसा करने को तैयार हूँ।

जेलर – पर सागर जरा सोच, अगर वह स्वतंत्रता मिल भी गयी, तो तुझे क्या मिल जाएगा? तेरा घर, तेरा परिवार.......

सागर – (हल्की हँसी के साथ) स्वतंत्रता के दीवाने संसार से कुछ लेने की नहीं, संसार को कुछ देने की तमन्ना रखते हैं जेलर साहब! वे अपने जीवन की साँसों के मोतियों से अपना घर नहीं, संसार को सजाते हैं।

जेलर – वो तो ठीक है सागर, पर मान लो, तुमने जीवन भर संघर्ष किया और फिर भी स्वतंत्रता नहीं मिली तो?

सागर – तो क्या हो जाएगा? हम तो यह मानकर चलते है कि स्वतंत्रता का संग्राम एक लम्बा सफर है। हम तो बस, प्राणों की मशाल जलाकर उस पर चलना जानते हैं। कितना चल पाएँगे, कितना बढ़ पाएँगे कौन जानता है?

जेलर – और चलते–चलते जिंदगी के कदम थम गए तो?

सागर – तो यह मशाल, हम किसी और के हाथों में सौंपकर मौत की गोद में सिर रखकर आराम से सो जाएँगे.........

जेलर – पर सागर! जब तक जान है, तब तक जहान है। क्या तुझे विश्वास है कि इन तेज तूफानों में तुम्हारी यह मशाल जलती रह सकेगी?

सागर – वह मशाल ही क्या जेलर साहब, जो तूफ़ानों में बुझ जाए? फिर भी अगर यह मशाल बुझने लगी, तो हज़ारों दूसरी मशालें प्रज्वलित करके बुझेगी। हर मशाल को एक ना एक दिन बुझना ही पड़ता है, चाहे जल्दी या देर से। फिर बुझने से क्या डर?

जेलर – पर सागर! उस स्वतन्त्रता से क्या फायदा, जो मौत के बाद मिले।

सागर – (बीच में बात काटकर) स्वतन्त्रता–सेनानी आम का बाग लगाता है जेलर साहब! वह जानता है, इस आम का अमृत उसे नहीं मिलेगा। वह अपने प्राण बोकर, खून–पसीने से सींचकर, यह अमृत–फल आने वाली पीढ़ियों के लिए उगाता है। स्वतन्त्रता संग्राम भी इसी भावना से लड़ा जा रहा है। भगीरथ गंगा खुद के लिए नहीं लाया था। युगों–युगों तक लोग उस भागीरथी से अपने तन–मन की प्यास बुझाते रहेंगे।

जेलर – गंगा लाने पर भगीरथ का नाम तो अमर हो गया, पर तेरा नाम इस अँधेरी काल–कोठरी में घुट–घुट कर मिट जायेगा........

सागर – नींव का पत्थर कब कहता है जेलर साहब कि मेरी कहानी बने। उस पर खड़ा भवन ही उसकी जीवन्त कहानी होता है। अँधेरे में गलकर भी वह अजर–अमर है, चाहे उसका स्वयं का अस्तित्व उजागर न हो। इसीलिए नींव के पत्थर का महत्व हर कीर्ति–स्तम्भ से बढ़कर होता है।

जेलर – फिर भी हर काम करने वाला नाम तो चाहता ही है।

सागर – (हल्की हँसी) जेलर साहब! बसन्त लाने के लिए झड़ने वाले पत्ते कब कहते हैं कि कोई उनके यशोगीत गाए। वे तो चुपचाप झड़ जाते हैं और चुपचाप धरती की गोद में खाद बनकर समा जाते हैं और उनके स्थान पर उग आते हैं नये–नये, हरे–हरे पत्ते।

जेलर – फिर भी सागर! मनुष्य का जीवन चौरासी लाख योनियों में भटकने के बाद भी मुश्किल से मिलता है – उसे यूँ नष्ट करना, बिना किसी फल की आशा के ?

सागर – यज्ञ में आहुति देने वाला यह नहीं देखता जेलर साहब कि उसकी आहुति से कौन–सी लपट उठती है? उठती भी है या नहीं? वह तो बस आहुति देना ही अपना धर्म समझता है।

जेलर – पर तुम्हारी एक आहुति से यज्ञ की कौनसी पूर्णाहुति हो जाएगी?

सागर – जेलर साहब ! जैसे एक बीज गलकर ही सैकड़ों बीज पैदा करता है, एक लौ जलकर ही, हजारों दीप जला सकती है, एक लहर उठकर ही हजारों

उठा सकती है, वैसे ही एक शहीद भी अपने प्राणों के बीज बोकर शहीदों की अमर फसल उगा सकता है। मेरे प्राणों की आहुति चाहे पूर्णाहुति न बने, पर यज्ञ को प्रज्वलित तो रखेगी ही! मेरे प्राणों का दीप..........

जेलर – पर सागर! तुम्हारे प्राणों का दीप बुझा दिया जाएगा और उसकी रोशनी की एक किरण तक को इस कोठरी से बाहर नहीं फैलने दिया जाएगा.......

सागर – पर आग बुझ कर भी वातावरण की साँसों में वह गर्मी भर जाती है जो कहीं लपट बनकर फिर जल सकती है।

जेलर – ये सब जुनून की बातें हैं। तुम यहाँ परकोटे में कैद हो। यहाँ तुम्हारी आवाज को कुचल दिया जाएगा.......उस दम तोड़ती आवाज को कोई सुन नहीं पाएगा। तुम्हारे सपनों की दुनिया इसी काल–कोठरी में दफन हो जाएगी।

सागर – (हँसकर) आवाज कभी मरती नहीं जेलर साहब! मेरी आवाज का यदि गला घोंटा गया, तो वह जनता की आवाज बन जाएगी और जनता की आवाज कभी दब नहीं सकती, कभी मर नहीं सकती। (सोचकर) फिर शहीदों की जिन्दगी तो लुप्त गंगा की तरह होती है जेलर साहब! जो कहीं भी, किसी भी धरातल को फोड़कर बह निकलती है। उसे कोई जंजीर, कोई जेल, कोई दीवार, कोई परकोटा बाँध नहीं सकता।

जेलर – यह सब पागलपन है सागर ! तुमने कभी सोचा, तुम कितने स्वार्थी हो? तुम्हारे इस जीवन पर सिर्फ तुम्हारा ही हक नहीं है, तुम्हारे परिवार का भी अधिकार है। जानते हो, तुम्हारे बूढ़े पिता तुम्हारे लिए तरस–तरस कर मर गए? दिन–रात गोपा–गोपा की रट लगाते हुए, तुम्हें पुकारते–पुकारते तुम्हारी बीमार बूढ़ी माँ के प्राण पखेरु न जाने कब उड़ जाएँ? तुम्हारे भाई कितने दुःखी हैं? सूनी गोद वाली तुम्हारी पत्नी दिन–रात कितनी रोती है? क्या तुम्हें इन सब पर दया नहीं आती?

सागर – जेलर साहब! (थोड़ा दुःखी होकर) मैं एक आँख से इन्हें देखता हूँ तो दूसरी आँख से देश की दुःखी जनता को देखता हूँ। एक कान से इनकी पुकारें सुनता हूँ। जेलर साहब! मातृभूमि, मेरी माँ की माँ है, देश मेरे पिता का पिता है। मेरे देशवासी मेरे परिजनों से बढ़कर हैं। यदि मेरे घर वालों के दुःख–आँसू भारत माता के होंठों पर सुख–स्वतन्त्रता की मुस्कान रचा सके, तो मैं अपने परिवार की हर कराह–हर आँसू सहने को तैयार हूँ।

जेलर – देखो, मेरी बात मानो, व्यर्थ प्राण गँवाने से कोई फायदा नहीं। महारावल जवाहरसिंह कोई पराये नहीं, अपने ही अन्नदाता हैं। उनको पिता समझकर माफी माँग लो।

सागर – (चिल्लाकर) नहीं, कभी नहीं! उस खूनी दरिन्दे से माफी? जिसने जैसलमेर की सारी जनता के भविष्य को अँधेरे से ढक रखा है, जिसने कानून और अदालत को काली कठपुतली बना रखा है। जो चोर, डाकू और खूनियों के बलबूते पर राज्य चला रहा है, उससे माफी? धत्त कभी नहीं!

जेलर – तो वे तुझे मार डालेंगे। उनका कानून, उनका दण्ड, तेरे इस घमंड को चूर–चूर कर देगा। तुम्हारे.........

सागर – कानून और दण्ड के काले हाथ फूल को डाली से नोंचकर मसल सकते हैं जेलर साहब, पर उसकी महक नष्ट नहीं कर सकते। महक तो हवाओं की धरोहर होती है, जो फैले बिना नहीं रहती। वे मेरे तन को दबा सकते हैं, मेरे मन को नहीं। मुझे मार सकते हैं, मेरी भावना को नहीं, मेरी आत्मा को नहीं।

जेलर – देख, मैं तुझे समझाता हूँ। तू मान जा। नहीं तो ये तेरी बोटी–बोटी नोच लेंगे–तुझे ये ऐसी यातनाएँ देंगे कि पत्थर का कलेजा भी दहल जाए।

सागर – (साहस से) ये दुःख और यातनाएँ स्वतन्त्रता की आग में घी सींचने का काम करेंगी, जेलर साहब! जितना इस तन को सताया जाएगा, उतना ही प्राणों की लौ और तेज होगी। स्वतन्त्रता का कमल शहीदों के रक्त–सरोवर में ही उगता, बढ़ता है। (रुककर साँस लेता है)

जेलर – अरे, पगले! ये तेरे पाँव तोड़ देंगे, तेरे हाथ तोड़ देंगे, तुम्हारी आँखें फोड़ देंगे, तुम्हारे प्राण ले लेंगे।

सागर – (हँसकर) मातृभूमि के दीवाने तन का जीवन नहीं, मन का जीवन जीते हैं। फिर मेरे पाँव टूटने पर यदि मेरे देश का एक कदम आगे बढ़े, मेरे हाथ टूटने पर यदि देश के हाथ थोड़े मजबूत होते हों, मेरी आँखें फूटने से यदि देश को नई नजर मिले, मेरे प्राण लेने से यदि देश को नया जीवन मिले, तो मैं इन्हें खोना अपना परम सौभाग्य मानूँगा। मेरा नाम सागर है जेलर साहब! मेरी गहराइयों को तोप और तलवार हिला नहीं सकतीं।

जेलर – अब तुझे कैसे समझाऊँ? मेरा तो यही कहना है..........

(बाहर से गुमानसिंह बोलता हुआ आता है। उसके हाथ में बेंत है। वह गुस्से में नजर आता है। साथ में बीरबल आदि भी हैं।)

गुमान – यह आपका कहना नहीं मानेगा जेलर साहब! मेरा कहना मानेगा। आपकी मीठी चाल से यह बस में नहीं आएगा। लातों के भूत बातों से नहीं मानते। आज मैं इसे वो मजा चखाऊँगा कि लोग सदियों तक याद रखेंगे। आपको महारावल साहब याद फरमा रहे हैं। (जेलर सागर की ओर देखता है और हल्का सा काँप कर बाहर चला जाता है।)

गुमान – (क्रोध से) हाँ तो सागर, बता तूने रेजीडेन्ट एलिंगटन को गुप्त पत्र कैसे भेजे? तूने जवाहरलाल नेहरु को, जयनारायण व्यास और हीरालाल शास्त्री व दीवान को पत्र क्यों लिखे? बोल, नहीं तो आज तेरा खून पी जाऊँगा। तूने मेरी और महारावल की बहुत निन्दा की है। बोल, नहीं तो तुझे कच्चा चबा जाऊँगा। (दाँत पीसता है)

सागर – सच्चाई कहने का हर इन्सान का हक है, गुमानसिंह। तुम्हारे काले कारनामों का पर्दाफाश.........

गुमान – (जोर से बेंत मारकर) काले कारनामों का पर्दाफाश......और कर (दो–तीन बेंत मारता है।) लगता है तेरी मौत ही तुझे नागपुर से जैसलमेर खींच लाई है। लगता है तेरी मौत मेरे हाथों ही..........

सागर – मुझे मौत नहीं, मेरी जन्मभूमि का प्यार यहाँ खींच लाया है। मेरी मौत नहीं, लगता है सामन्तशाही की मौत मुझे यहाँ खींच लाई है। लगता है सामन्तशाही की अर्थी में मेरा कंधा लगेगा, लगता है महाराज और तुम दोनों.......

गुमान – (चीखकर) चुप रह बदतमीज, तेरी जुबान खींच लूँगा (जोर से पुकार कर)

बीरबल – अहमद इसे ले जाओ और "माचा चढ़ाओ" इसके मुँह, नाक, आँख और निचले अंगों में मिर्च भर दो। इसकी ऐसी हालत कर दो कि यह मौत के लिए भीख माँगे और मौत भी इसे भीख न दे। खींच डालो इसकी खाल। (वे लोग आकर जबरदस्ती सागरमल को घसीट कर बाहर ले जाते हैं। गुमानसिंह कोठरी में कुछ सोचता हुआ चक्कर लगाता है। लगता है कोई भयंकर निर्णय लेने वाला है। थोड़ी देर में सागरमल की दिल दहला देने वाली चीखें सुनाई देती हैं और उन लोगों का अट्टहास। गुमानसिंह भी सागरमल का चीखना सुनकर मुस्कराता है)

सागर – (पीछे से आवाज) नहीं........ नहीं, अरे मेरी टाँग चिर रही है। अरे! मेरे प्राण निकल रहे हैं – अरे........ अरे........ अरे........ मेरी आँखों में मिर्च डाल दी। आह अरे........ अरे........ मुझे छोड़ दो। अरे राक्षसों बस करो.......... अरे...... अरे ये–ये मिर्च मेरे.......... मेरे........... मत चढ़ाओ – अरे मेरे रोम–रोम में आग लग गई। छोड़ दो मुझे (थोड़ी देर आवाजें आती हैं। फिर वे लोग हँसते हुए अर्ध बेहोश–कराहते हुए सागरमल को लाते हैं। उससे चला नहीं जाता। लड़खड़ाता हुआ चलता है। उसके मुँह–आँख–नाक में मिर्च दबी नजर आ रही है। उसके निचले अंगों में मिर्च की लुगदी चढ़ाई हुई है। उसकी धोती खून से तरबतर है। लाकर वे उसे छोड़ देते हैं। वह धम्म से गिर जाता है। वे सभी जोर से हँसते हैं। सागरमल दर्द से तड़पता है। उसके मुँह से चीख निकलती है।)

गुमान – (हँसता हुआ जेब से कागज निकालकर) सागर! अपनी जान बचाना चाहता है तो मेरा कहना मान। इस माफीनामे पर दस्तखत कर दे।

सागर – (चीखकर) मेरे मौत के पैगाम पर दस्तखत करा ले गुमानसिंह, पर माफीनामे पर जीते जी दस्तख़त नहीं करुँगा। तुम लोगों ने पहले भी नारकीय यातनाएँ देकर मुझसे गफलत में दस्तखत करा लिए और मुझे नाहक बदनाम किया। अब मैं हाथ कटवा सकता हूँ पर किसी कागज पर दस्तखत नहीं करुँगा।

गुमान – तू क्या नहीं करेगा। तेरी छाया करेगी....... तूने गुमानसिंह का गुस्सा नहीं देखा? देख या तो माफीनामे पर दस्तखत कर दे.........

सागर – (बीच में बात काटकर) ताकि माफीनामा दिखाकर तुम मुझे जनता की नजरों में गिरा सको। दस्तखत करके जनता और सरकार को बता सको कि मुझ पर कोई अत्याचार नहीं किया जा रहा......... गुमानसिंह! तुम्हारी यह साजिश सफल नहीं होगी.........

गुमान – (व्यंग्य में हँसकर) गुमान का हर मोहरा ठीक जगह पर बैठता है, सागरमल! अगर........ तूने इन कागजों पर दस्तखत नहीं किए तो, तुझे मिट्टी का तेल छिड़क कर जिन्दा जला दूँगा और............

सागर – और उस आग में तुम्हारा साम्राज्य जल जाएगा – जनता तुम लोगों को जीने नहीं देगी। इससे वो क्रान्ति होगी कि तुम्हारे जुल्म के शासन की नींवें तक हिल जाएँगी।

गुमान – गुमानसिंह ने कच्ची गोलियाँ खेलना नहीं सीखा है सागर! तुमने जगह–जगह पत्रों में लिखा है कि इस अत्याचार को नहीं सह सकता....... इससे तो आत्महत्या ही करना अच्छा......... (हँसता हुआ खूनी भेड़िये–सी नजर टिकाकर) समझे कि नहीं?

सागर – समझ गया। तुम मेरी हत्या पर आत्महत्या का कफन ओढ़ाने की कोशिश करोगे, पर भारत की जनता तुम्हारी इस चाल को मात दे देगी।

गुमान – नहीं, कभी नहीं। तेरे परदादे ने भी आत्महत्या की थी। यह तो तुम्हारा पुश्तैनी रोग है।

सागर – (गुस्से से चीखकर) झूठे...... नीच...... राक्षस....... तू...... तू...... इतना गिरा हुआ है।

गुमान – (गुस्से से) मुझे नीच कहता है।

सागर – हाँ....... हाँ....... नीच, हजार बार नीच।

गुमान – (गुस्से से) बीरबल मिट्टी के तेल का कनस्तर ला। इसे आज मजा चखाकर ही रहूँगा।

(बीरबल चुप खड़ा सोच रहा है।)

(चीखकर) मैं कहता हूँ, ला (बीरबल जाकर चुपचाप कनस्तर लाता है। गुमानसिंह कनस्तर लेकर सागर की तरफ बढ़ता हुआ।)

सागर – हाँ, हाँ...... कहूँगा...........

गुमान – (गुस्से से) कहेगा ?

सागर – हाँ कहूँगा।

(गुमानसिंह आग बबूला हो जाता है।)

गुमान – तो ले – (तेल सागरमल पर छिड़कता है।) अब भी सोच ले, वरना माचिस जलाता हूँ।

सागर – जला ले

गुमान – जला लूँ ?

सागर – हाँ, हाँ जला ले।

गुमान – (माचिस निकाल कर जलाता हुआ) यह जलाई और अब–अब तू देखते ही देखते राख हो जाएगा। बोल! माफीनामे पर दस्तखत करता है कि नहीं?

सागर – (साहसपूर्वक) नहीं करुँगा, जल जाना मंजूर है, पर माफी नहीं माँगूँगा।

गुमान – (गुस्से से) नहीं माँगेगा? आखिरी बार पूछ रहा हूँ।

सागर – नहीं माँगूँगा, राक्षस।

गुमान – (गुस्से से) राक्षस! तो ले! (माचिस लगा देता है। सागर के कपड़ों में आग लगती है। वह बुझाने का प्रयास करता है। गुमानसिंह और उसके साथी हँसते हैं। धीरे–धीरे आग तेज होती है।)

{इस दृश्य को रंगमंच के पीछे आग का प्रभाव पैदा करके भी दिखाया जा सकता है सिर्फ आवाजें आती रहें। अन्त में जले हुए सागर को रंगमंच पर लाया जा सकता है।}

अब भी माफी माँगे तो आग बुझ सकती है, बोल–

सागर – अगर हो सके तो थोड़ा तेल और छिड़क दे गुमानसिंह ताकि तेरे और मेरे दोनों के मन के अरमान पूरे हो जाएँ।

गुमान – (हँसकर) इसकी आखिरी इच्छा भी पूरी कर दो। (तेल छिड़कता है – आग तेज होती है – सागर जलने लगता है। आग तीव्र होती है तो चीख पड़ता है।)

सागर – भारत माता की जय, भारत माता की जय।

गुमान – (हँसकर) अरे! इसकी आवाजें दूसरों को सुनाई देंगी। इसके साथ–साथ बोलो "महारावल की जय" ताकि इसकी आवाज दब जाय। (सागर ज्यों ही भारत माता की जय बोलता है, वे तीनों साथ–साथ महारावल की जय बोलते हैं। उससे सागर की आवाज दब जाती है और सिर्फ सागरमल की "जय" सुनाई देती है मानो सागरमल भी महारावल की जय बोल रहा है।)

सागर – भारत माता की जय (जलने के कारण तड़पता है) भारत माता की जय (वे तीनों उसके चारों तरफ हँसते हुए चक्कर लगाते हैं तथा महारावल की जय के नारे लगाते हैं। सागर थोड़ी देर तड़पकर भारत माता की जय, भारत माता की जय बोलता हुआ धरती पर गिर जाता है। गुमानसिंह और उसके साथियों के अट्टहास के साथ पर्दा गिरता है।)

कठिन शब्दार्थ

आतताई – अत्याचारी।
नजराना – कर, उपहार, भेंट।
पीवणा – साँप की एक प्रजाति।
पैगाम – संदेश।
जुल्म – अन्याय, अत्याचार।
कचूमर – कुचलना।
नब्ज – नाड़ी, नस।
तमन्ना – इच्छा, कामना।
आहुति – हवन में डालने की सामग्री, यज्ञ।
प्रज्वलित – जलता हुआ, चमकता हुआ।
अर्थी – शव यात्रा।
नारकीय – नरक जैसी, नरक के समान।
गफलत – भूल, असावधानी।
नाहक – व्यर्थ में।
साजिश – षड्यन्त्र।
पुश्तैनी – पीढ़ियों से चला आता हुआ।
अरमान – इच्छा।
अट्टहास – बहुत जोर की हँसी।
माचा चढ़ाना – पुलिस द्वारा दी जाने वाले अमानवीय यातनाएँ, पुलिस का थर्ड डिग्री ट्रीटमेन्ट।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. सागरमल गोपा ने किस स्वेच्छाचारी राज्य के खिलाफ विद्रोह किया था?
   (क) बीकानेर (ख) नागपुर (ग) जैसलमेर (घ) जोधपुर
2. सागरमल गोपा ने किन स्वतंत्रता सेनानियों को पत्र लिखे थे?
   (क) जवाहरलाल नेहरू (ख) जयनारायण व्यास
   (ग) हीरालाल शास्त्री (घ) उपर्युक्त तीनों को

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. 'अमर शहीद' एकांकी का मुख्य पात्र कौन है?
4. जेलर का क्या नाम है?
5. पुलिस अधीक्षक का क्या नाम है?
6. सागरमल गोपा द्वारा रचित पुस्तकें कौन–कौन–सी हैं?
7. "हमें चाहिए स्वतंत्रता.........सिर्फ स्वतंत्रता" यह कथन किसने एवं किसको कहा?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. सागरमल गोपा को जेल में दी गई यातनाओं का वर्णन कीजिए।
9. "मातृभूमि के दीवाने तन का जीवन नहीं मन का जीवन जीते हैं" – पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक –

10. अमर शहीद एकांकी के आधार पर सागरमल गोपा का चरित्र चित्रण कीजिए।
11. ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए –
    (क) "आवाज कभी मरती नहीं...................बाँध नहीं सकता।"
    (ख) "स्वतंत्रता सेनानी आम का बाग..........................प्यास बुझाते रहेंगे।"

14
मोहन राकेश
(जन्म : 1925 ई. / मृत्यु : 1972 ई.)

जीवन परिचय –

नई कहानी आन्दोलन के सशक्त हस्ताक्षर मोहन राकेश का जन्म 8 जनवरी 1925 को अमृतसर में हुआ था। इन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी और अंग्रेजी में एम.ए. किया। जीविकोपार्जन के लिए कुछ वर्षों तक अध्यापन का कार्य किया। इस प्रसंग में वे लाहौर, मुम्बई, शिमला, जालंधर और दिल्ली में रहे। कुछ वर्षों तक कहानी की प्रसिद्ध पत्रिका 'सारिका' का संपादन किया। 'आषाढ़ का एक दिन' एवं 'आधे–अधूरे' नाटक के लिए संगीत नाटक अकादमी ने इन्हें 1968 में पुरस्कृत एवं सम्मानित किया। 3 दिसम्बर 1972 को नई दिल्ली में इनका असमय निधन हुआ।

प्रमुख कृतियाँ –

उपन्यास	– अंधेरे बन्द कमरे, अन्तराल, न आने वाला कल
नाटक	– आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे–अधूरे
कहानी संग्रह	– क्वार्टर तथा अन्य कहानियाँ, वारिस तथा अन्य कहानियाँ
निबंध संग्रह	– परिवेश
भ्रमण वृत्तान्त	– आख़िरी चट्टान तक

पाठ परिचय –

प्रस्तुत पाठ 'आखिरी चट्टान' एक रोचक यात्रा संस्मरण है। दिसम्बर 1952 से फरवरी 1953 के बीच मोहन राकेश ने गोआ से कन्याकुमारी तक की यात्रा की थी। मानव–मनोविज्ञान और सामाजिक संरचना की सूक्ष्म समझ के कारण यह यात्रा वृत्तान्त भौतिक विवरण और आन्तरिक मनोदशा का उदाहरण बन गई है। भाषा इतनी पारदर्शी है कि लेखक के अनुभव पाठक के अनुभव में रूपान्तरित होने लगते हैं। कन्याकुमारी के सूर्यास्त एवं सूर्योदय का अत्यन्त सूक्ष्म अंकन इस पाठ की अनुपम विशेषता है। मानो लेखक ने कलम से प्रकृति का चित्रांकन किया हो।

आख़िरी चट्टान

कन्याकुमारी। सुनहले सूर्योदय और सूर्यास्त की भूमि।

केप होटल के आगे बने बाथ टैंक के बायीं तरफ, समुद्र के अन्दर से उभरी स्याह चट्टानों में से एक पर खड़ा होकर मैं देर तक भारत के स्थल–भाग की आख़िरी चट्टान को देखता रहा। पृष्ठभूमि में कन्याकुमारी के मन्दिर की लाल और सफ़ेद लकीरें चमक रही थीं। अरब सागर, हिन्द महासागर और बंगाल की खाड़ी–इन तीनों के संगम–स्थल–सी वह चट्टान, जिस पर कभी स्वामी विवेकानन्द ने समाधि लगायी थी, हर तरफ से पानी की मार सहती हुई स्वयं भी समाधि– स्थित–सी लग रही थी। हिन्द महासागर की ऊँची–ऊँची लहरें मेरे आसपास की स्याह चट्टानों से टकरा रही थीं। बलखाती लहरें रास्ते की नुकीली चट्टानों से कटती हुई आती थीं जिससे उनके ऊपर चूरा बूँदों की जालियाँ बन जाती थीं। मैं देख रहा था और अपनी पूरी चेतना से महसूस कर रहा था–शक्ति का विस्तार, विस्तार की शक्ति। तीनों तरफ से क्षितिज तक पानी–ही–पानी था, फिर भी सामने का क्षितिज, हिन्द महासागर का, अपेक्षया अधिक दूर और अधिक गहरा जान पड़ता था। लगता था कि उस ओर दूसरा छोर है ही नहीं। तीनों ओर के क्षितिज को आँखों में समेटता मैं कुछ देर भूला रहा कि मैं मैं हूँ, एक जीवित व्यक्ति, दूर से आया यात्री, एक दर्शक। उस दृश्य के बीच में जैसे दृश्य का एक हिस्सा बनकर खड़ा रहा–बड़ी–बड़ी चट्टानों के बीच एक छोटी–सी चट्टान जब अपना होश हुआ, तो देखा कि मेरी चट्टान भी तब तक बढ़ते पानी में काफी घिर गयी है। मेरा पूरा शरीर सिहर गया। मैंने एक नज़र फिर सामने के उमड़ते विस्तार पर डाली और पास की एक सुरक्षित चट्टान पर कूदकर दूसरी चट्टानों पर से होता हुआ किनारे पर पहुँच गया।

पश्चिमी क्षितिज में सूर्य धीरे–धीरे नीचे जा रहा था। मैं सूर्यास्त की दिशा में चलने लगा। दूर पश्चिमी तट–रेखा के एक मोड़ के पीली रेत का एक ऊँचा टीला नज़र आ रहा था। सोचा उस टीले पर जाकर सूर्यास्त देखूँगा।

यात्रियों की कितनी ही टोलियाँ उस दिशा में जा रही थीं। मेरे आगे कुछ मिशनरी युवतियाँ मोक्ष की समस्या पर विचार करती चल रही थीं। मैं उनके पीछे–पीछे चलने लगा–चुपके से मोक्ष का कुछ रहस्य पा लेने के लिए। यूँ उनकी बातों से कहीं रहस्यमय आकर्षण उनके युवा शरीरों में था और पीली रेत की पृष्ठभूमि में उनके लबादों के हिलते हुए स्याह–सफ़ेद रंग बहुत आकर्षक लग रहे थे। मोक्ष का रहस्य अभी बीच में ही था कि हम लोग टीले पर पहुँच गये। यह वह 'सैंड हिल' थी जिसकी चर्चा मैं वहाँ पहुँचने के बाद से ही सुन रहा था। सैंड हिल पर बहुत–से लोग थे। आठ–दस नवयुवतियाँ, छह–सात नवयुवक और दो–तीन गाँधी टोपियोंवाले व्यक्ति। वे शायद सूर्यास्त देख रहे थे। गवर्नमेंट गेस्ट हाउस के बैरे उन्हें सूर्यास्त के समय की कॉफ़ी पिला रहे थे। उन लोगों के वहाँ होने से सैंड हिल बहुत रंगीन हो उठी थी। कन्याकुमारी का सूर्यास्त देखने के लिए उन्होंने विशेष रुचि के साथ

सुन्दर रंगों का रेशम पहना था। हवा समुद्र की तरह उस रेशम में भी लहरें पैदा कर रही थी। मिशनरी युवतियाँ वहाँ आकर थकी–सी एक तरफ़ बैठ गयीं–उस पूरे कैनवस में एक तरफ़ छिटके हुए कुछ बिन्दुओं की तरह। उनसे कुछ दूर का एक रंगहीन बिन्दु, मैं, ज़्यादा देर अपनी जगह स्थिर नहीं रह सका। सैंड हिल से सामने का पूरा विस्तार तो दिखाई दे रहा था, पर अरब सागर की तरफ़ एक और ऊँचा टीला था जो उधर के विस्तार को ओट में लिये था। सूर्यास्त पूरे विस्तार की पृष्ठभूमि में देखा जा सके, इसके लिए मैं कुछ देर सैंड हिल पर रुका रहकर आगे उस टीले की तरफ़ चल दिया। पर रेत पर अपने अकेले क़दमों को घसीटता वहाँ पहुँचा, तो देखा कि उससे आगे उससे भी ऊँचा एक और टीला है। जल्दी–जल्दी चलते हुए मैंने एक के बाद एक कई टीले पार किये। टाँगें थक रही थीं, पर मन थकने को तैयार नहीं था। हर अगले टीले पर पहुँचने पर लगता कि शायद अब एक ही टीला और है, उस पर पहुँचकर पश्चिमी क्षितिज का खुला विस्तार अवश्य नज़र आ जाएगा, और सचमुच एक टीले पर पहुँचकर वह खुला विस्तार सामने फैला दिखाई दे गया– वहाँ से दूर तक रेत की लम्बी ढलान थी, जैसे वह टीले से समुद्र में उतरने का रास्ता हो। सूर्य तब पानी से थोड़ा ही ऊपर था। अपने प्रयत्न की सार्थकता से सन्तुष्ट होकर मैं टीले पर बैठ गया–ऐसे जैसे वह टीला संसार की सबसे ऊँची चोटी हो, और मैंने, सिर्फ़ मैंने, उस चोटी को पहली बार सर किया हो।

पीछे दायीं तरफ़ दूर–दूर हटकर उगे नारियलों के झुरमुट नज़र आ रहे थे। गूँजती हुई तेज़ हवा से उनकी टहनियाँ ऊपर को उठ रही थीं। आकाश की तरफ़ उठकर हिलती हुई वे टहनियाँ ऐसे लग रही थीं जैसे उन्मुक्त रति के क्षणों में किन्हीं नग्न वन–युवतियों की बाँहें। पश्चिमी तट के साथ–साथ सूखी पहाड़ियों की एक श्रृंखला दूर तक चली गयी थी जो सामने फैली रेत के कारण बहुत रूखी, बीहड़ और वीरान लग रही थी। सूर्य पानी की सतह के पास पहुँच गया था। सुनहली किरणों ने पीली रेत को एक नया–सा रंग दे दिया था। उस रंग में रेत इस तरह चमक रही थी जैसे अभी–अभी उसका निर्माण करके उसे वहाँ उँडेला गया हो। मैंने उस रेत पर दूर तक बने अपने पैरों के निशानों को देखा। लगा जैसे रेत का कुँवारापन पहली बार उन निशानों से टूटा हो। इससे मन में एक सिहरन भी हुई, हल्की उदासी भी घिर आयी।

सूर्य का गोला पानी की सतह से छू गया। पानी पर दूर तक सोना–ही–सोना ढुल आया। पर वह रंग इतनी जल्दी बदल रहा था कि किसी भी एक क्षण के लिए उसे एक नाम दे सकना असम्भव था। सूर्य का गोला जैसे एक बेबसी में पानी के लावे में डूबता जा रहा था। धीरे–धीरे वह पूरा डूब गया और कुछ क्षण पहले जहाँ सोना बह रहा था, वहाँ अब लहू बहता नज़र आने लगा। कुछ और क्षण बीतने पर वह लहू भी धीरे–धीरे बैज़नी और बैज़नी से काला पड़ गया। मैंने फिर एक बार मुड़कर दायीं तरफ़ पीछे देख लिया। नारियलों की टहनियाँ उसी तरह हवा में ऊपर उठी थीं, हवा उसी तरह गूँज रही थी, पर पूरे दृश्यपट पर स्याही फैल गयी थी। एक–दूसरे से दूर खड़े झुरमुट, स्याह पड़कर, जैसे लगातार सिर धुन

रहे थे और हाथ–पैर पटक रहे थे। मैं अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ और अपनी मुट्ठियाँ भींचता–खोलता कभी उस तरफ़ और कभी समुद्र की तरफ़ देखता रहा।

अचानक ख़याल आया कि मुझे वहाँ से लौटकर भी जाना है। इस ख़याल से ही शरीर में कँपकँपी भर गयी। दूर सैंड हिल की तरफ़ देखा। वहाँ स्याही में डूबे कुछ धुँधले रंग हिलते नज़र आ रहे थे। मैंने रंगों को पहचानने की कोशिश की, पर उतनी दूर से आकृतियों को अलग–अलग कर सकना सम्भव नहीं था। मेरे और उन रंगो के बीच स्याह पड़ती रेत के कितने ही टीले थे। मन में डर समाने लगा कि क्या अँधेरा होने से पहले मैं उन सब टीलों को पार करके जा सकूँगा ? कुछ क़दम उस तरफ़ बढ़ा भी। पर लगा कि नहीं। उस रास्ते से जाऊँगा, तो शायद रेत में ही भटकता रह जाऊँगा। इसलिए सोचा बेहतर है नीचे समुद्र–तट पर उतर जाऊँ–तट का रास्ता निश्चित रूप से केप होटल के सामने तक ले जाएगा। निर्णय तुरन्त करना था, इसलिए बिना और सोचे मैं रेत पर बैठकर नीचे तट की तरफ़ फिसल गया। पर तट पर पहुँचकर फिर कुछ क्षण बढ़ते अँधेरे की बात भूला रहा। कारण था तट की रेत। यूँ पहले भी समुद्र–तट पर कई–कई रंगों की रेत देखी थी– सुरमई, ख़ाकी, पीली और लाल। मगर जैसे रंग उस रेत में थे, वैसे मैंने पहले कभी कहीं की रेत में नहीं देखे थे। कितने ही अनाम रंग थे वे, एक–एक इंच पर एक–दूसरे से अलग...और एक–एक रंग कई–कई रंगों की झलक लिये हुए। काली घटा और घनी लाल आँधी को मिलाकर रेत के आकार में ढाल देने से रंगों के जितनी तरह के अलग–अलग सम्मिश्रण पाये जा सकते थे, वे सब वहाँ थे– और उनके अतिरिक्त भी बहुत–से रंग थे। मैंने कई अलग–अलग रंगों की रेत को हाथ में लेकर देखा और मसलकर नीचे गिर जाने दिया। जिन रंगों को हाथों से नहीं छू सका, उन्हें पैरों से मसल दिया। मन था कि किसी तरह हर रंग की थोड़ी–थोड़ी रेत अपने पास रख लूँ। पर उसका कोई उपाय नहीं था। यह सोचकर कि फिर किसी दिन आकर उस रेत को बटोरूँगा, मैं उदास मन से वहाँ से आगे चल दिया।

समुद्र में पानी बढ़ रहा था। तट की चौड़ाई धीरे–धीरे कम होती जा रही थी। एक लहर मेरे पैरों को भिगो गयी, तो सहसा मुझे ख़तरे का एहसास हुआ। मैं जल्दी–जल्दी चलने लगा। तट का सिर्फ़ तीन–तीन चार–चार फ़ुट हिस्सा पानी से बाहर था। लग रहा था कि जल्दी ही पानी उसे भी अपने अन्दर समा लेगा। एक बार सोचा कि खड़ी रेत से होकर फिर ऊपर चला जाऊँ। पर वह स्याह पड़ती रेत इस तरह दीवार की तरह उठी थी कि उस रास्ते ऊपर जाने की कोशिश करना ही बेकार था। मेरे मन में ख़तरा बढ़ गया। मैं दौड़ने लगा। दो–एक और लहरें पैरों के नीचे तक आकर लौट गयीं। मैंने जूता उतारकर हाथ में ले लिया। एक ऊँची लहर से बचकर इस तरह दौड़ा जैसे सचमुच वह मुझे अपनी लपेट में लेने आ रही हो। सामने एक ऊँची चट्टान थी वक़्त पर अपने को सँभालने की कोशिश की, फिर भी उससे टकरा गया। बाँहों पर हल्की खरोंच आ गयी, पर ज़्यादा चोट नहीं लगी। चट्टान पानी के अन्दर तक चली गयी थी–उसे बचाकर आगे जाने के लिए पानी में उतरना आवश्यक था। पर उस समय पानी की तरफ़ पाँव बढ़ाने का मेरा साहस नहीं हुआ। मैं चट्टान की नोकों पर पैर

रखता किसी तरह उसके ऊपर पहुँच गया। सोचा नीचे खड़े रहने की अपेक्षा वह अधिक सुरक्षित होगा। पर ऊपर पहुँचकर लगा जैसे मेरे साथ एक मज़ाक किया गया हो। चट्टान के उस तरफ़ तट का खुला फैलाव था—लगभग सौ फुट का। कितने ही लोग वहाँ टहल रहे थे। ऊपर सड़क पर जाने के लिए वहाँ से रास्ता भी बना था। मन से डर निकल जाने से मुझे अपना—आप काफ़ी हल्का लगा और मैं चट्टान से नीचे कूद गया।

रात। केप होटल का लॉन। अँधेरे में हिन्द महासागर को काटती कुछ स्याह लकीरें—एक पौधे की टहनियाँ। नीचे सड़क पर टार्च जलाता—बुझाता एक आदमी। दक्षिण—पूर्व के क्षितिज में एक जहाज़ की मद्धिम—सी रोशनी।

मन बहुत बेचैन था—बिना पूरी तरह भीगे सूखती मिट्टी की तरह। जगह मुझे इतनी अच्छी लगी थी कि मन था अभी कई दिन, कई सप्ताह, वहाँ रहूँ। पर अपने भुलक्कड़पन की वजह से एक ऐसी हिमाक़त कर आया था कि लग रहा था वहाँ से तुरन्त लौट जाना पड़ेगा। अपना सूटकेस खोलने पर पता चला था कि कनानोर में सत्रह दिन रहकर जो अस्सी—नब्बे पन्ने लिखे थे, वे वहीं मेज़ की दराज़ में छोड़ आया हूँ। अब मुझे दो में से एक चुनना था। एक तरफ़ था कन्याकुमारी का सूर्यास्त, समुद्र—तट और वहाँ की रेत। दूसरी तरफ़ अपने हाथ के लिखे काग़ज़ जो शायद अब भी सेवाय होटल की एक दराज़ में बन्द थे। मैं देर तक बैठा सामने देखता रहा—जैसे कि पौधे की टहनियों या उनके हाशिये में बन्द महासागर के पानी से मुझे अपनी समस्या का हल मिल सकता है।

कुछ देर में एक गीत का स्वर सुनाई देने लगा जो धीरे—धीरे पास आता गया। एक कान्वेंट की बस होटल के कम्पाउंड में आकर रुक गयी। बस में बैठी लड़कियाँ अँग्रेज़ी में एक गीत गा रही थीं जिसमें समुद्र के सितारे को सम्बोधित किया गया था। उस गीत को सुनते हुए और दूर जहाज़ की रोशनी के ऊपर एक चमकते सितारे को देखते हुए मन और उदास होने लगा। गहरी साँझ के सुरमई रंग में रंगी वह आवाज़ मन की गहराई के किसी कोमल रोयें को हलके—हलके सहला रही थी। लग रहा था कि उस रोयें की ज़िद शायद मुझे वहाँ से जाने नहीं देगी। लेकिन उससे भी ज़िद्दी एक और रोयाँ था— दिमाग़ के किसी कोने मे अटका—जो सुबह वहाँ से जानेवाली बसों का टाइम—टेबल मुझे बता रहा था। गीत के स्वरों की प्रतिक्रिया में साथ टाइम—टेबल के हिन्दसे जुड़ते जा रहे थे—पहली बस सात पन्द्रह, दूसरी आठ पैंतीस, तीसरी...। थोड़ी देर में बस लौट गयी, गीत के स्वर विलीन हो गये और मन में केवल हिन्दसों की चर्ख़ी चलती रह गयी।

ग्रेजुएट नवयुवक मुझे बता रहा था कि कन्याकुमारी की आठ हज़ार को आबादी में कम—से—कम चार—पाँच सौ शिक्षित नवयुवक ऐसे हैं जो बेकार हैं। उनमें से सौ के लगभग ग्रेजुएट हैं। उनका मुख्य धन्धा है नौकरियों के लिए अर्ज़ियाँ देना और बैठकर आपस में बहस करना। वह ख़ुद वहाँ फ़ोटो—अलबम बेचता था। दूसरे नवयुवक भी उसी तरह के छोटे—मोटे काम करते थे। "हम लोग सीपियों का गूदा खाते हैं और दार्शनिक सिद्धान्तों पर बहस करते

हैं," वह कह रहा था। "इस चट्टान से इतनी प्रेरणा तो हमें मिलती ही है।" मुझे दिखाने के लिए उसने वहीं से एक सीपी लेकर उसे तोड़ा और उसका गूदा मुँह में डाल लिया।

पानी और आकाश में तरह–तरह के रंग झिलमिलाकर, छोटे–छोटे द्वीपों की तरह समुद्र में बिखरी स्याह चट्टानों की चोट से सूर्य उदित हो रहा था। घाट पर बहुत–से लोग उगते सूर्य को अर्घ्य देने के लिए एकत्रित थे। घाट से थोड़ा हटकर गवर्नमेंट गेस्ट–हाउस के बैरे सरकारी मेहमानों को सूर्योदय के समय की कॉफ़ी पिला रहे थे। दो स्थानीय नवयुवतियाँ उन्हें अपनी टोकरियों से शंख और मालाएँ दिखला रही थीं। वे लोग दोनों काम साथ–साथ कर रहे थे–मालाओं का मोल–तोल और अपने बाइनाक्युलर्ज़ से सूर्य–दर्शन। मेरा साथी अब मोहल्ले–मोहल्ले के हिसाब से मुझे बेकारी के आँकड़े बता रहा था। बहुत–से कडल–काक हमारे आसपास तैर रहे थे–वहाँ की बेकारी की समस्या और सूर्योदय की विशेषता, इन दोनों से बे–लाग।

मेरे साथियों का कहना था कि लौटते हुए नाव को घाट की तरफ़ से घुमाकर लाएँगे, हालाँकि मल्लाह उस तूफ़ान में उधर जाने के हक़ में नहीं थे। बहुत कहने पर मल्लाह किसी तरह राज़ी हो गये और नाव को घाट की तरफ़ ले चले। नाव विवेकानन्द चट्टान के ऊपर से घूमकर लहरों के थपेड़े खाती उस तरफ़ बढ़ने बढ़ने लगी। वह रास्ता सचमुच बहुत ख़तरनाक था–जिस रास्ते से हम आये थे, उससे कहीं ज़्यादा। नाव इस तरह लहरों के ऊपर उठ जाती थी कि लगता था नीचे आने तक ज़रूर उलट जाएगी। फिर भी हम घाट के बहुत क़रीब पहुँच गये। ग्रेजुएट नवयुवक घाट से आगे की चट्टान की तरफ़ इशारा करके कह रहा था, "यहाँ आत्महत्याएँ बहुत होती हैं। अभी दो महीने पहले एक लड़की ने उस चट्टान से कूदकर आत्म–हत्या कर ली थी।"

मैंने सरसरी तौर पर आश्चर्य प्रकट कर दिया। मेरा ध्यान उसकी बात में नहीं था। मैं आँखों से तय करने की कोशिश कर रहा था कि घाट और नाव के बीच अब कितना फ़ासला बाक़ी है।

एक लहर ने नाव को इस तरह धकेल दिया कि मुश्किल से वह उलटते–उलटते बची। आगे तीन–चार चट्टानों के बीच एक भँवर पड़ रहा था। नाव अचानक एक तरफ़ से भँवर में दाख़िल हुई और दूसरी तरफ़ से निकल आयी। इससे पहले कि मल्लाह उसे सँभाल पाते, वह फिर उसी तरह भँवर में दाख़िल होकर घूम गयी। मुझे कुछ क्षणों के लिए भँवर और उससे घूमती नाव के सिवा और किसी चीज़ की चेतना नहीं रही। चेतना हुई जब भँवर में तीन–चार चक्कर खा लेने के बाद नाव किसी तरह उससे बाहर निकल आयी। यह अपने–आप या मल्लाहों की कोशिश से, मैं नहीं कह सकता। भँवर से कुछ दूर आ जाने पर ग्रेजुएट नवयुवक ने बताया कि हम उस चट्टान को लगभग छूकर आये हैं जिस पर से कूदकर उस नवयुवती ने कन्याकुमारी की साक्षी में आत्महत्या की थी। पर मैंने तब तक उस चट्टान की तरफ़ ध्यान से नहीं देखा जब तक हम किनारे के बहुत पास नहीं पहुँच गये। यह

भी वहाँ पहुँचकर जाना कि घाट की तरफ़ से आने का इरादा छोड़कर मल्लाह उसी रास्ते से नाव को वापस लाये हैं जिस रास्ते से पहले ले गये थे।

कन्याकुमारी के मन्दिर में पूजा की घंटियाँ बज रही थीं। भक्तों की एक मंडली अन्दर जाने से पहले मन्दिर की दीवार के पास रुककर उसे प्रणाम कर रही थी। सरकारी मेहमान गेस्ट–हाउस की तरफ़ लौट रहे थे। हमारी नाव और किनारे के बीच हल्की धूप में कई एक नावों के पाल और कडलकाकों के पंख एक–से चमक रहे थे। मैं अब भी आँखों से बीच की दूरी नाप रहा था और मन में बसों का टाइम–टेबल दोहरा रहा था। तीसरी बस नौ चालीस पर, चौथी.....।

उसके बाद एक शाम और वहाँ रुककर कनानोर लौट गया। वहाँ जाकर अपने लिखे काग़ज़ मिल तो गये, पर तब तक चौकीदार ने उन्हें मोड़कर उनकी कॉपी बना ली थी। काग़ज़ों पर लिखाई एक ही तरफ़ थी, इसलिए उनके ख़ाली हिस्सों पर उसने अपना हिसाब लिखना शुरू कर दिया था। जब मैंने वह कॉपी उससे ली, तो उसे शायद उससे कम निराशा नहीं हुई जितनी कन्याकुमारी पहुँचकर अपना सूटकेस खोलने पर मुझे हुई थी।

कठिन शब्दार्थ

विस्तार	–	फैलाव
संगम	–	मिलन स्थल
क्षितिज	–	जहाँ धरती और गगन के मिलने का आभास हो।
चोटी	–	शिखर
झुरमुट	–	पेड़ या झाड़ी जिनकी डालियाँ मिलकर कुंज–सा बना रही हों।
सुरमई	–	सुरमे के रंग का; हल्का नीला
हिन्दसे	–	अंक यानी 1,2,3 को अरबी में हिन्दसे कहते हैं। कारण कि अंक योजना हिन्द से गई थी।
कडलकाकों	–	समुद्री पक्षी

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. मोहन राकेश ने किस कहानी पत्रिका का सम्पादन किया?
   (क) सारिका (ख) दिनमान (ग) धर्मयुग (घ) कल्पना
2. सुनहले सूर्योदय और सूर्यास्त की भूमि है –
   (क) हिन्द महासागर (ख) अरब सागर
   (ग) बंगाल की खाड़ी (घ) कन्याकुमारी

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कन्याकुमारी में किन तीन सागरों का संगम होता है?
4. विवेकानन्द ने कहाँ समाधि लगायी थी?
5. लेखक को किन पेड़ों के झुरमुट दिखाई दिए?
6. कनाकोर के होटल में लेखक क्या भूल आया था?
7. कन्याकुमारी भारत के किस राज्य में है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. सूर्यास्त के समय समुद्र के पानी का किन विविध रंगों में परिवर्तन हुआ?
9. सूर्यास्त के बाद लेखक के मन में क्या डर समाया?
10. सूर्योदयकालीन क्षणों में लेखक ने क्या देखा?
11. ग्रेजुएट नवयुवक से लेखक की क्या बातचीत हुई?

निबंधात्मक प्रश्न –

12. नवलेखन में बहुतायत अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हो रहा है? क्या इसे आप सही मानते हैं? इस पाठ में जिन अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हुआ है; उसकी सूची बनाएँ।
13. "भारत प्रकृति का खूबसूरत उपहार है" – पाठ के आलोक में इस कथन की व्याख्या कीजिए।
14. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) मैं देख रहा था और अपनी पूरी चेतना से .... एक जीवित व्यक्ति, दूर से आया यात्री, एक दर्शक।
    (ख) सूर्य का गोला पानी की सतह से छू गया...................................... लहू भी धीरे–धीरे बैज़नी और बैज़नी से काला पड़ गया।

15
रामधारी सिंह दिनकर

(जन्म : 1908 ई. / मृत्यु : 1974 ई.)

जीवन परिचय –

राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्य धारा के प्रमुख कवियों में दिनकर का नाम अग्रगण्य है। मैथिलीशरण गुप्त के बाद दिनकर राष्ट्र कवि के रुप में जाने गए। रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म बिहार के मुँगेर जिले के सिमरिया गाँव के एक साधारण किसान परिवार में हुआ। उनकी बी.ए. तक की शिक्षा पटना विश्वविद्यालय में हुई।

विभिन्न विभागों में अपनी सेवाएँ देने के बाद गृह मंत्रालय में हिन्दी सलाहकार का पद सँभाला।

उनकी प्रमुख कृतियों में 'उर्वशी' को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, 'संस्कृति के चार अध्याय' को साहित्य अकादमी और 'कुरुक्षेत्र' को विश्व के 100 सर्वश्रेष्ठ काव्यों में 74 वाँ स्थान दिया गया । वे 1952 में भारतीय संसद के सदस्य रहे हैं। भारत सरकार द्वारा उनको पद्मभूषण से अलंकृत किया गया है।

कृतियाँ – रेणुका, हुँकार, रसवन्ती, कुरुक्षेत्र, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा।

पाठ परिचय –

'ईर्ष्या, तू न गई मेरे मन से' पाठ 'अर्द्धनारीश्वर' पुस्तक से संकलित किया गया है। प्रस्तुत निबंध में कवि रामधारी सिंह दिनकर ने मानव चरित्र की सबसे भयावह बुराई 'ईर्ष्या' के बारे में उल्लेख किया है। कवि ने ईर्ष्यालु मनुष्य के चरित्र की कमजोरियों को उदाहरण के साथ बखूबी स्पष्ट किया है कि किस प्रकार ईर्ष्यालु व्यक्ति अपने पास उपलब्ध साधनों से आनंद न उठाकर दूसरों के पास उपलब्ध साधनों से कुढ़कर अपने जीवन मूल्यों का ह्रास करता है। कवि दिनकर ने एक तरफ ईर्ष्यालु लोगों से बचने का उपाय बताया है तो दूसरी तरफ जो लोग ईर्ष्यालु स्वभाव के हैं वे किस प्रकार ईर्ष्या की लत से बच सकते हैं, के लिए रास्ता सुझाया है।

निश्चय ही यह निबंध स्वाभाविक मानवीय कमजोरियों को दृष्टिपात कराने में भाव एवं भाषा की दृष्टि से समर्थ है।

ईर्ष्या, तू न गई मेरे मन से

मेरे घर के दाहिने एक वकील रहते हैं, जो खाने पीने में अच्छे हैं। दोस्तों को भी खूब खिलाते हैं और सभा सोसाइटियों में भी भाग लेते हैं। बाल बच्चों से भरा पूरा परिवार, नौकर भी सुख देने वाले और पत्नी भी अत्यन्त मृदुभाषिणी। भला एक सुखी मनुष्य को और क्या चाहिए। मगर वे सुखी नहीं हैं। उनके भीतर कौन–सा दाह है, इसे मैं भली–भाँति जानता हूँ। दरअसल उनके बगल में जो बीमा एजेन्ट है उनके वैभव की वृद्धि से वकील साहब का कलेजा जलता रहता है। वकील साहब को भगवान ने जो कुछ दे रखा है, वह उनके लिए काफी नहीं दिखता। वह इस चिन्ता में भुने जा रहे हैं कि काश एजेन्ट की मोटर, उसकी मासिक आय और उसकी तड़क–भड़क मेरी भी हुई होती।

ईर्ष्या का यही अनोखा वरदान है। जिस मनुष्य के हृदय में ईर्ष्या घर बना लेती है, वह उन चीजों से आनन्द नहीं उठाता जो उसके पास मौजूद हैं, बल्कि उन वस्तुओं से दुःख उठाता है जो दूसरों के पास हैं। वह अपनी तुलना दूसरों के साथ करता है और इस तुलना में अपने पक्ष के सभी अभाव उसके हृदय पर दंश मारते हैं। दंश के इस दाह को भोगना कोई अच्छी बात नहीं है। मगर ईर्ष्यालु मनुष्य करें भी तो क्या ? आदत से लाचार होकर उसे यह वेदना भोगनी ही पड़ती है।

एक उपवन को पाकर भगवान को धन्यवाद देते हुए उसका आनन्द नहीं लेना और बराबर इस चिन्ता में निमग्न रहना कि इससे भी बड़ा उपवन क्यों नहीं मिला। यह ऐसा दोष है जिससे ईर्ष्यालु व्यक्ति का चरित्र भी भयंकर हो उठता है। अपने अभाव पर दिन–रात सोचते वह सृष्टि की प्रक्रिया को भूलकर विनाश में लग जाता है और अपनी उन्नति के लिए उद्यम करना छोड़कर वह दूसरों को हानि पहुँचाने को ही अपना श्रेष्ठ कर्तव्य समझने लगता है।

ईर्ष्या की बेटी का नाम निन्दा है, जो व्यक्ति ईर्ष्यालु होता है वही बुरे किस्म का निन्दक भी होता है। दूसरों की निन्दा वह इसलिए करता है कि इस प्रकार दूसरे लोग जनता अथवा मित्रों की आँखों से गिर जाएँगे और जो स्थान है उस पर मैं अनायास ही बैठा दिया जाऊँगा। मगर ऐसा न आज तक हुआ है और न होगा। दूसरों को गिराने की कोशिश तो अपने को बढ़ाने की कोशिश नहीं कही जा सकती। एक बात और है कि संसार में कोई भी मनुष्य निन्दा से नहीं गिरता। उसके पतन का कारण सद्गुणों का ह्रास होता है। इसी प्रकार कोई भी मनुष्य दूसरों की निन्दा करने से अपनी उन्नति नहीं कर सकता। उन्नति तो उसकी तभी होगी जब वह अपने चरित्र को निर्मल बनाए तथा गुणों का विकास करे।

ईर्ष्या का काम जलाना है मगर सबसे पहले वह उसी को जलाती है, जिसके हृदय में उसका जन्म होता है। आप भी ऐसे बहुत से लोगों को जानते होंगे जो ईर्ष्या और द्वेष की

साकार मूर्ति है और जो बराबर इस फिक्र में लगे रहते हैं कि कहाँ सुनाने वाला मिले और अपने दिल का गुबार निकालने का मौका मिले। श्रोता मिलते ही उनका ग्रामोफोन बजने लगता है और वे बड़ी ही होशियारी के साथ एक–एक काण्ड इस ढंग से सुनाते हैं मानो विश्व कल्याण को छोड़कर उनका और कोई ध्येय नहीं हो। अगर जरा अपने इतिहास को देखिए और समझने की कोशिश कीजिए कि जब से उन्होंने इस सुकर्म का आरम्भ किया है, तब से वे अपने क्षेत्र में आगे बढ़े हैं या पीछे हटे हैं। यह भी कि वे निन्दा करने में संयम और शक्ति का अपव्यय नहीं करते तो आज उनका स्थान कहाँ होता।

चिन्ता को लोग चिता कहते हैं। जिसे किसी प्रचंड चिंता ने पकड़ लिया है, उस बेचारे की जिन्दगी ही खराब हो जाती है, किन्तु ईर्ष्या शायद फिर चिन्ता से भी बदतर चीज है क्योंकि वह मनुष्य के मौलिक गुणों को ही कुंठित बना डालती है।

मृत्यु शायद फिर भी श्रेष्ठ है बनिस्पत इसके कि हमें अपने गुणों को कुंठित बनाकर जीना पड़े, चिंतादग्ध व्यक्ति समाज की दया का पात्र है, किन्तु ईर्ष्या से जला–भुना आदमी जहर की चलती–फिरती गठरी के समान है जो हर जगह वायु को दूषित करती फिरती है।

ईर्ष्या मनुष्य का चारित्रिक दोष नहीं है। प्रत्युत इससे मनुष्य के आनन्द में भी बाधा पड़ती है। जब भी मनुष्य के हृदय में ईर्ष्या का उदय होता है, सामने का सुख उसे मद्धिम–सा दिखने लगता है। पक्षियों के गीत में जादू नहीं रह जाता और फूल तो ऐसे हो जाते हैं मानो वे देखने के योग्य ही नहीं हो।

आप कहेंगे कि निन्दा के बाण अपने प्रतिद्वंदियों को बेधकर हँसने में एक आनंद है और यह आनंद ईर्ष्यालु व्यक्ति का सबसे बड़ा पुरस्कार है। मगर यह हँसी मनुष्य की नहीं, राक्षस की हँसी होती है। यह आनंद दैत्यों का आनंद होता है।

ईर्ष्या का एक पक्ष सचमुच ही लाभदायक हो सकता है जिसके अधीन हर आदमी, हर जाति, और हर दल अपने को अपने प्रतिद्वंदी का समकक्ष बनाना चाहता है, किन्तु यह तभी संभव है जबकि ईर्ष्या से जो प्रेरणा आती हो, वह रचनात्मक हो।

अक्सर तो ऐसा ही होता है कि ईर्ष्यालु व्यक्ति यह महसूस करता है कि कोई चीज है जो उसके भीतर नहीं है। कोई वस्तु है जो दूसरों के पास है, किन्तु वह यह नहीं समझ पाता कि इस वस्तु को प्राप्त कैसे करना चाहिए और गुस्से में आकर वह अपने किसी पड़ोसी मित्र या समकालीन व्यक्ति को अपने से श्रेष्ठ मानकर उससे जलने लगता है, जबकि ये लोग भी अपने आप से शायद वैसे ही असंतुष्ट हों।

आपने यही देखा होगा कि शरीफ लोग यह सोचते हुए अपना सिर खुजलाया करते हैं कि फलाँ आदमी मुझसे क्यों जलता है ? मैंने तो उसका कुछ नहीं बिगाड़ा और अमुक व्यक्ति इस कदर निंदा में क्यों लगा हुआ है ? सच तो यह है कि मैंने सबसे अधिक भलाई उसकी ही की है।

यह सोचते हैं—मैं तो पाक साफ हूँ, मुझमें किसी व्यक्ति के लिए दुर्भावना नहीं, बल्कि अपने दुश्मनों की भी भलाई ही सोचा करता हूँ। फिर ये लोग मेरे पीछे क्यों पड़े हुए हैं? मुझमें कौन—सा वह एब है जिसे दूर करके मैं इन दोस्तों को चुप कर सकता हूँ ?

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जब इस तजुर्बे से होकर गुजरे, तब उन्होंने एक सूत्र कहा—"तुम्हारी निन्दा वही करेगा, जिसकी तुमने भलाई की है।"

और नीत्से जब इस कूचे से होकर निकला, तब उसने जोरों का एक ठहाका लगाया और कहा कि "यार, ये तो बाजार की मक्खियाँ हैं, जो अकारण हमारे चारों ओर भिनभिनाया करती है।"

ये सामने प्रशंसा और पीठ पीछे निन्दा किया करते हैं। हम इनके दिमाग में बैठे हुए हैं, ये मक्खियाँ हमें भूल नहीं सकती और चूँकि ये हमारे बारे में सोचा करती है, इसलिए ये हमसे डरती है और हम पर शंका भी करती है।

ये मक्खियाँ हमें सजा देती है हमारे गुणों के लिए। ये एब को तो माफ कर देंगी, क्योंकि बड़ों के एब को माफ करने में भी शान है, जिस शान का स्वाद लेने के लिए ये मक्खियाँ तरस रही हैं। जिनका चरित्र उन्नत है, जिनका हृदय निर्मल और विशाल है, वे कहते हैं—"इन बेचारों की बातों से क्या चिढ़ना ? ये तो खुद ही छोटे हैं।"

जिनका दिल छोटा है और दृष्टि संकीर्ण है, वे मानते हैं कि जितनी भी बड़ी हस्तियाँ हैं, उनकी निन्दा ठीक है। और जब हम प्रीति, उदारता एवं भलमनसाहत का बर्ताव करते हैं, तब भी वे यही समझते हैं कि हम उनसे घृणा कर रहे हैं और हम चाहे उनका जितना उपकार करें, बदले में हमें अपकार ही मिलेगा।

दरअसल हम जो उनकी निन्दा का जवाब न देकर चुप्पी साधे रहते हैं, उसे भी वे हमारा अहंकार समझते हैं। खुशी तो उन्हें तभी हो सकती है, जब हम उनके धरातल पर उतर कर उनके छोटेपन के भागीदार बन जाएँ।

सारे अनुभवों को निचोड़ कर नीत्से ने एक दूसरा सूत्र कहा,—"आदमी में जो गुण महान समझे जाते हैं, उन्हीं के चलते लोग उससे जलते भी हैं।"

तो ईर्ष्यालु लोगों से बचने का क्या उपाय है? नीत्से कहता है कि "बाजार की मक्खियों को छोड़कर एकांत की ओर भागो। जो कुछ भी अमर तथा महान है, उसकी रचना और निर्माण बाजार के सुयश से दूर रह कर किया जाता है। जो लोग नये मूल्यों का निर्माण करने वाले होते हैं, वे बाजारों में नहीं बसते, वे शोहरत के पास भी नहीं रहते।" जहाँ बाजार की मक्खियाँ नहीं भनकती, वहाँ एकान्त है।

यह तो हुआ ईर्ष्यालु लोगों से बचने का उपाय, किन्तु ईर्ष्या से आदमी कैसे बच सकता है?

ईर्ष्या से बचने का उपाय मानसिक अनुशासन है। जो व्यक्ति ईर्ष्यालु स्वाभाव का है, उसे फालतू बातों के बारे में सोचने की आदत छोड़ देनी चाहिए। उसे यह भी पता लगाना चाहिए कि जिस अभाव के कारण वह ईर्ष्यालु बन गया है, उसकी पूर्ति का रचनात्मक तरीका क्या है। जिस दिन उसके भीतर यह जिज्ञासा आएगी, उसी दिन से वह ईर्ष्या करना कम कर देगा।

कठिन शब्दार्थ

मृदुभाषिणी	–	मधुर बोलने वाली।
दंश	–	पीड़ा।
वेदना	–	दु:ख।
सद्गुण	–	अच्छी आदत।
प्रचंड	–	तीव्र, तेज।
प्रतिद्वंदियों	–	विरोधियों।
निंदा	–	बुराई।
तजुर्बे	–	अनुभवों।
संकीर्ण	–	छोटी।
उपकार	–	भलाई।
अपकार	–	बुराई।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 'उर्वशी' कृति को कौन–सा पुरस्कार मिला है ?

   (क) साहित्य अकादमी (ख) भारतीय ज्ञानपीठ

   (ग) व्यास सम्मान (घ) मूर्ति देवी सम्मान

2. ''तुम्हारी निन्दा वहीं करेगा, जिसकी तुमने भलाई की है'' यह किस महापुरूष का कथन है ?

   (क) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (ख) नीत्से

   (ग) दिनकर (घ) गाँधी

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. कवि ने ईर्ष्या की बेटी का क्या नाम दिया है?
4. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने क्या सूत्र दिया है?
5. नीत्से ने ईर्ष्यालु लोगों के जलने का क्या कारण बताया है?
6. ईर्ष्या सबसे पहले किसको जलाती है?
7. पाठ के अनुसार किसी मनुष्य की उन्नति कब सम्भव है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. लेखक के पड़ोसी वकील के मन में कौन–सा दाह है?
9. ईर्ष्यालु लोगों से बचने के लिए नीत्से ने क्या उपाय सुझाया है?
10. लेखक ने ईर्ष्यालु व्यक्ति के क्या लक्षण बताए हैं?

निबंधात्मक प्रश्न –

11. 'ईर्ष्या, तू न गई मेरे मन से' रचना का मूल भाव अपने शब्दों में लिखिए?
12. 'चिन्ता को लोग चिता कहते हैं।' के समर्थन में अपनी बात रखते हुए स्पष्ट कीजिए?
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) ईर्ष्या की बेटी का नाम निन्दा है................................ मै अनायास ही बैठा दिया जाऊँगा।
    (ख) चिन्ता को लोग चिता कहते हैं... वह मनुष्य के मौलिक गुणों को ही कुंठित बना डालती है।

16
महादेवी वर्मा
(जन्म : 1907 ई. / मृत्यु : 1987 ई.)

जीवन परिचय –

महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 को फर्रुखाबाद (उ.प्र.) में हुआ। इनके पिता गोविंद प्रसाद वर्मा भागलपुर में एक कॉलेज प्राध्यापक थे। माता हेमरानी देवी एक धर्मपरायण एवं कर्मनिष्ठ गृहिणी थी। महादेवी वर्मा की प्रारंभिक शिक्षा इंदौर में मिशन स्कूल में तथा आगे की शिक्षा क्रास्थवेट गर्ल्स कॉलेज इलाहाबाद में हुई। क्रास्थवेट कॉलेज में सुभद्राकुमारी चौहान के संपर्क में इनके साहित्यिक जीवन की शुरुआत हुई। महादेवी का विवाह अल्प आयु में ही बरेली के पास नवाबगंज कस्बे के निवासी स्वरुपनारायण वर्मा के साथ हुआ लेकिन इनको वैवाहिक जीवन के प्रति विरक्ति–सी रही। आपने लंबे समय तक प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्राचार्य के रुप में कार्य किया। इनका निधन 1987 में इलाहाबाद में हुआ।

महादेवी वर्मा छायावादी युग की प्रमुख कवयित्री हैं। इनके काव्य में अन्तर्मन की वेदना एवं पीड़ा की अभिव्यक्ति एवं अज्ञात–अलौकिक सत्ता के प्रति समर्पण भाव मिलता है। इस कारण महादेवी वर्मा को आधुनिक युग की मीरा कहा जाता है। काव्य लेखन के साथ इनको रेखाचित्र, संस्मरण एवं निबंध आदि गद्य विधाओं में भी सफलता मिली। रेखाचित्र एवं संस्मरण विधा को महादेवी जी ने नई ऊँचाई प्रदान की है। इन्होंने संस्मरणों में साधारण–से प्राणी एवं पशु–पक्षियों को प्रधान चरित्र बनाकर मार्मिक तथा भावात्मक शैली के बल पर इनको असाधारण व्यक्तित्व प्रदान किया है। इनकी शृंखला की कड़ियाँ (1942) रचना से हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श की शुरुआत मानी जाती है।

प्रमुख रचनाएँ –

नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा, यामा (काव्यसंग्रह), अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ, पथ के साथी, मेरा परिवार (रेखाचित्र संस्मरण) शृंखला की कड़ियाँ, विवेचनात्मक गद्य, साहित्यकार की आस्था एवं अन्य निबंध, संकल्पिता, क्षणदा (निबंध संग्रह)।

पुरस्कार –

महादेवी वर्मा को सेकसरिया पुरस्कार (1934 नीरजा के लिए), मंगलाप्रसाद पारितोषिक (1943), पद्य भूषण (1956), ज्ञानपीठ पुरस्कार (1982,यामा काव्य संग्रह हेतु) पद्य विभूषण (1988,मरणोपरान्त) आदि पुरस्कार प्राप्त हुए।

पाठ परिचय –

प्रस्तुत संस्मरण में महादेवी वर्मा ने 'गौरा' गाय के जीवन का बेहद सजीव वर्णन किया गया है। इस संस्मरण में पशु–पक्षियों के अपनत्व एवं कृतज्ञता जैसे मानवीय भावों को उद्घाटित किया गया है। गौरा का व्यक्तित्व जितना आकर्षक एवं भव्य था उसका अंत भी उतना ही करुण एवं मार्मिक हुआ। संस्मरण का अंत "आह मेरा गोपालक देश" से होता है जो समाज में व्याप्त ईर्ष्या एवं स्वार्थपरता की ओर गहरा व्यंग्य है जिसके कारण गौरा को असामयिक निर्मम मृत्यु प्राप्त हुई। 'गौरा' संस्मरण महादेवी वर्मा के 'मेरा परिवार' संस्मरण संग्रह में संगृहीत है।

गौरा

गौरा मेरी बहिन के घर पली हुई गाय की वयः सन्धि तक पहुँची हुई बछिया थी। उसे इतने स्नेह और दुलार से पाला गया था कि वह अन्य गोवत्साओं से कुछ विशिष्ट हो गई थी।

बहिन ने एक दिन कहा, तुम इतने पशु–पक्षी पाला करती हो–एक गाय क्यों नहीं पाल लेती, जिसका कुछ उपयोग हो। वास्तव में मेरी छोटी बहिन श्यामा अपनी लौकिक बुद्धि में मुझसे बहुत बड़ी है और बचपन से उनकी कर्मनिष्ठा तथा व्यवहारकुशलता की बहुत प्रशंसा होती रही है, विशेषतः मेरी तुलना में।

यदि वे आत्मविश्वास के साथ कुछ कहती हैं तो उनका विचार संक्रामक रोग के समान सुनने वाले को तत्काल प्रभावित करता है। आश्चर्य नहीं, उस दिन उनके उपयोगितावाद संबंधी भाषण ने मुझे इतना अधिक प्रभावित किया कि तत्काल उस सुझाव का कार्यान्वयन आवश्यक हो गया।

वैसे खाद्य की किसी भी समस्या के समाधान के लिए पशु–पक्षी पालना मुझे कभी नहीं रुचा। बकरी, कुक्कुट, मछली आदि पालने के मूल उद्देश्य का ध्यान आते ही मेरा मन विद्रोह करने लगता है।

पर उस दिन मैंने ध्यानपूर्वक गौरा को देखा। पुष्ट लचीले पैर, भरे पुट्ठे, चिकनी भरी हुई पीठ, लम्बी सुडौल गर्दन, निकलते हुए छोटे–छोटे सींग, भीतर की लालिमा की झलक देते हुए कमल की दो अधखुली पंखुड़ियों– जैसे कान, लम्बी और अंतिम छोर पर काले सघन चामर का स्मरण दिलाने वाली पूँछ, सब कुछ साँचे में ढला हुआ–सा था। गाय को मानों इटैलियन मार्बल में तराशकर उस पर ओप दी गई हो।

स्वस्थ पशु के रोमों की सफेदी में एक विशेष चमक होती है। गौरा की उज्ज्वलता देखकर ऐसा लगा, मानो उसके रोमों पर अभ्रक का चूर्ण मल दिया गया हो, जिसके कारण जिधर आलोक पड़ता था, उधर विशेष चमक उत्पन्न हो जाती थी।

गौरा को देखते ही मेरी पालने के संबंध में दुविधा निश्चय में बदल गई। गाय जब मेरे बँगले पर पहुँची, तब मेरे परिचितों और परिचारकों में श्रद्धा का ज्वार–सा उमड़ आया। उसे लाल–सफेद गुलाबों की माला पहनाई, केशर–रोली का बड़ा–सा टीका लगाया गया, घी का चौमुखा दिया जलाकर आरती उतारी गई और उसे दही–पेड़ा खिलाया गया। उसका नामकरण हुआ गौरांगिनी या गौरा। पता नहीं, इस पूजा–अर्चा का उस पर क्या प्रभाव पड़ा, परन्तु वह बहुत प्रसन्न जान पड़ी। उसकी बड़ी, चमकीली और काली आँखों से जब आरती के दिये की लौ प्रतिफलित होकर झिलमिलाने लगी, तब कई दियों का भ्रम होने लगा। जान पड़ा, जैसे रात में काली दिखने वाली लहर पर किसी ने कई दिये प्रवाहित कर दिए हों।

गौरा वास्तव में बहुत प्रियदर्शनी थी, विशेषतः उसकी काली बिल्लौरी आँखों का तरल सौन्दर्य तो दृष्टि को बाँधकर स्थिर कर देता था। चौड़े, उज्ज्वल माथे और लम्बे तथा साँचे में ढले हुए से मुख पर आँखें बर्फ में नीले जल के कुण्डों के समान लगती थीं। उनमें एक अनोखा विश्वास का भाव रहता था। गाय के नेत्रों में हिरन के नेत्रों–जैसा चकित विस्मय न होकर एक आत्मीय विश्वास ही रहता है। उस पशु को मनुष्य से यातना ही नहीं, निर्मम मृत्यु तक प्राप्त होती है, परन्तु उसकी आँखों के विश्वास का स्थान न विस्मय ले पाता है, न आतंक। महात्मा गाँधी ने 'गाय करुणा की कविता है', क्यों कहा, यह उसकी आँखें देखकर ही समझ में आ सकता है।

गौरा की अलस मन्थर गति से तुलना करने योग्य कम वस्तुएँ हैं। तीव्र गति में सौन्दर्य है परन्तु वह मन्थर गति के सौन्दर्य को नहीं पाता। बाण की तीव्र गति क्षण भर के लिए दृष्टि में चकाचौंध उत्पन्न कर सकती है, परन्तु मन्द समीर से फूल का अपने वृन्त पर हौले–हौले हिलना दृष्टि का उत्सव है।

कुछ ही दिनों में वह इतनी हिलमिल गई कि अन्य पशु–पक्षी अपनी लघुता और उसकी विशालता का अन्तर भूल गए। कुत्ते–बिल्ली उसके पेट के नीचे और पैरों के बीच में खेलने लगे। पक्षी उसकी पीठ और माथे पर बैठकर उसके कान तथा आँखें खुजलाने लगे। वह भी स्थिर खड़ी रहकर और आँखें मूँदकर मानो उनके सम्पर्क–सुख की अनुभूति में खो जाती थी।

हम सबको वह आवाज से नहीं, पैर की आहट से भी पहचानने लगी। समय का इतना अधिक बोध उसे हो गया था कि मोटर के फाटक में प्रवेश करते ही वह बाँ–बाँ की ध्वनि में हमें पुकारने लगती। चाय, नाश्ता तथा भोजन के समय से भी वह इतनी परिचित थी कि थोड़ी देर कुछ पाने की प्रतीक्षा करने के उपरान्त रँभा–रँभाकर घर सिर पर उठा लेती थी।

उसका हमसे साहचर्यजनित लगाव स्नेह के समान ही निकटता चाहता था। निकट जाने पर वह सहलाने के लिए गर्दन बढ़ा देती, हाथ फेरने पर अपना मुख आश्वस्त भाव से कन्धे पर रख कर आँखें मूँद लेती। जब उससे दूर जाने लगते, तब गर्दन घुमा–घुमा कर देखती रहती। आवश्यकता के लिए उसके पास एक ही ध्वनि थी। परन्तु उल्लास, दुःख, उदासीनता, आकुलता आदि की अनेक छाया–छवियाँ उसकी बड़ी और काली आँखों में तैरा करती थीं।

एक वर्ष के उपरान्त गौरा एक पुष्ट सुन्दर वत्स की माता बनी। वत्स अपने लाल रंग के कारण गेरु का पुतला–जैसा जान पड़ता था। उसके माथे पर पान के आकार का श्वेत तिलक और चारों पैरों में खुरों के ऊपर सफेद वलय ऐसे लगते थे, मानों गेरू की बनी वत्समूर्ति को चाँदी के आभूषणों से अलंकृत कर दिया गया हो। बछड़े का नाम रखा गया लालमणि; परन्तु उसे सब लालू के संबोधन से पुकारने लगे। माता–पुत्र दोनों निकट रहने पर हिमराशि और जलते अंगारे का स्मरण कराते थे। अब हमारे घर में मानो दुग्ध–महोत्सव आरम्भ हुआ। गौरा प्रातः–सायं बारह सेर के लगभग दूध देती थी, अतः लालमणि के लिए कई सेर छोड़ देने पर भी इतना अधिक शेष रहता था कि आस–पास के बालगोपाल से लेकर कुत्ते–बिल्ली तक सब पर मानो 'दूधों नहाओ' का आशीर्वाद फलित होने लगा। कुत्ते–बिल्लियों ने तो एक अद्भुत दृश्य उपस्थित कर दिया था। दुग्ध–दोहन के समय वे सब गौरा के सामने एक पंक्ति में बैठ जाते और महादेव उनके आगे उनके खाने के लिए निश्चित बर्तन रख देता। किसी विशेष आयोजन पर आमन्त्रित अतिथियों के समान वे परम शिष्टता का परिचय देते हुए प्रतीक्षा करते रहते। फिर नाप–नाप कर सबके पात्रों में दूध डाल दिया जाता, जिसे पीने के उपरान्त वे एक बार फिर अपने–अपने स्वर में कृतज्ञता ज्ञापन–सा करते हुए गौरा के चारों ओर उछलने–कूदने लगते। जिस दिन उनके आने में विलम्ब होता, वह रँभा–रँभाकर मानो उन्हें पुकारने लगती।

पर अब दुग्ध दोहन की समस्या कोई स्थायी समाधान चाहती थी। नौकरी में नागरिक तो दुहना जानते ही नहीं थे और जो गाँव से आये थे, वे अनभ्यास के कारण यह कार्य इतना भूल चुके थे कि घण्टों लगा देते थे। गौरा के दूध देने के पूर्व जो ग्वाला हमारे यहाँ दूध देता था, जब उसने इस कार्य के लिए अपनी नियुक्ति के विषय में आग्रह किया, तब हमने अपनी समस्या का समाधान पा लिया।

दो–तीन मास के उपरान्त गौरा ने दाना–चारा खाना बहुत कम कर दिया और वह उत्तरोत्तर दुर्बल और शिथिल रहने लगी। चिन्तित होकर मैंने पशु–चिकित्सकों को बुलाकर दिखाया। वे कई दिनों तक अनेक प्रकार के निरीक्षण, परीक्षण, एक्सरे आदि द्वारा रोग का निदान खोजते रहे। अन्त में उन्होंने निर्णय दिया कि गाय को सुई खिला दी गई है, जो उसके रक्त–संचार के साथ हृदय तक पहुँच गई है। अब सुई गाय के हृदय के पार हो जाएगी तब रक्त–संचार रुकने से उसकी मृत्यु निश्चित है।

मुझे कष्ट और आश्चर्य दोनों की अनुभूति हुई। सुई खिलाने का क्या तात्पर्य हो सकता है? दाना–चारा तो हम स्वयं देखभाल कर देते हैं, परन्तु संभव है, उसी में सुई चली गई हो। पर डॉक्टर के उत्तर से ज्ञात हुआ कि दाने–चारे के साथ गई सुई गाय के मुख में ही छिदकर रह जाती है गुड़ की बड़ी डली के भीतर रखी सुई ही गले के नीचे उतर जाती है और अंततः रक्तसंचार में मिलकर हृदय में पहुँच सकती है।

अन्त में, एक ऐसा निर्मम सत्य उद्घाटित हुआ, जिसकी कल्पना भी मेरे लिए संभव नहीं थी। प्रायः कुछ ग्वाले ऐसे घरों में, जहाँ उनसे अधिक दूध लिया जाता है, गाय का आना सह नहीं पाते। अवसर मिलते ही वे गुड़ में लपेटकर सुई उसे खिलाकर उसकी असमय मृत्यु निश्चित कर देते हैं। गाय के मर जाने पर उन घरों में वे पुनः दूध देने लगते हैं। सूई की बात ज्ञात होते ही ग्वाला एक प्रकार से अन्तर्धान हो गया, अतः संदेह का विश्वास में बदल जाना स्वाभाविक था। वैसे उसकी उपस्थिति में कानूनी कार्यवाही के लिए आवश्यक प्रमाण जुटाना असम्भव था।

तब गौरा का मृत्यु से संघर्ष आरम्भ हुआ, जिसकी स्मृति–मात्र से आज भी मन सिहर उठता है। डॉक्टरों ने कहा, गाय को सेव का रस पिलाया जावे, तो सुई पर कैल्शियम जम जाने और उसके बचने की सम्भावना है। अतः नित्य कई–कई सेर सेव का रस निकाला जाता और नली से गौरा को पिलाया जाता। शक्ति के लिए इंजेक्शन पर इंजेक्शन दिये जाते। पशुओं के इंजेक्शन के लिए सूजे के समान बहुत लम्बी मोटी सिरिन्ज तथा बड़ी बोतल भर दवा की आवश्यकता होती है। अतः वह इंजेक्शन भी अपने आप में 'शल्यक्रिया', जैसा यातनामय हो जाता था। पर गौरा अत्यन्त शान्ति से बाहर और भीतर, दोनों ओर की चुभन और पीड़ा सहती थी। केवल कभी–कभी उसकी सुन्दर पर उदास आँखें के कोनों में पानी की दो बूँदें झलकने लगती थीं।

अब वह उठ नहीं पाती थी, परन्तु मेरे पास पहुँचते ही उसकी आँखों में प्रसन्नता की छाया–सी तैरने लगती थी। पास जाकर बैठने पर वह मेरे कन्धे पर अपना मुख रख देती थी और अपनी खुरदरी जीभ से मेरी गर्दन चाटने लगती थी।

लालमणि बेचारे को तो माँ की व्याधि और आसन्न मृत्यु का बोध नहीं था। उसे दूसरी गाय का दूध पिलाया जाता था, जो उसे रुचता नहीं था। वह तो अपनी माँ का दूध पीना और उससे खेलना चाहता था, अतः अवसर मिलते ही गौरा के पास पहुँचकर या अपना सिर मार–मार, उसे उठाना चाहता था या खेलने के लिए उसके चारों ओर उछल–कूद कर परिक्रमा ही देता रहता।

मैंने बहुत से जीव–जन्तु पाल रखे हैं, अतः उनमें से कुछ को समय–असमय विदा देनी ही पड़ती है। परन्तु ऐसी मर्मव्यथा का मुझे स्मरण नहीं है।

इतनी हृष्ट–पुष्ट, सुन्दर, दूध–सी उज्ज्वल पयस्विनी गाय अपने इतने सुंदर चंचल वत्स को छोड़कर किसी भी क्षण निर्जीव और निश्चेष्ट हो जायेगी, यह सोचकर ही आँसू आ जाते थे।

लखनऊ, कानपुर, आदि नगरों से भी पशु–विशेषज्ञों को बुलाया, स्थानीय पशु–चिकित्सक तो दिन में दो–तीन बार आते रहे, परन्तु किसी ने ऐसा उपचार नहीं बताया, जिससे आशा की कोई किरण मिलती है। निरुपाय मृत्यु की प्रतीक्षा का मर्म वही जानता है, जिसे किसी असाध्य और मरणासन्न रोगी के पास बैठना पड़ा हो।

जब गौरा की सुन्दर चमकीली आँखें निष्प्रभ हो चलीं और सेव का रस भी कंठ में रुकने लगा, तब मैंने अन्त का अनुमान लगा लिया। अब मेरी एक इच्छा थी कि मैं उसके अन्त समय उपस्थित रह सकूँ। दिन में ही नहीं ; रात में भी कई–कई बार उठकर मैं उसे देखने जाती रही।

अन्त में एक दिन ब्रह्ममुहूर्त में चार बजे मैं गौरा को देखने गई, तब जैसे ही उसने अपना मुख सदा के समान मेरे कन्धे पर रखा, वैसे ही एकदम पत्थर जैसा भारी हो गया और मेरी बाँह पर से सरककर धरती पर आ रहा। कदाचित् सुई ने हृदय को बेधकर बन्द कर दिया।

अपने पालित जीव–जन्तु के पार्थिव अवशेष मैं गंगा को समर्पित करती रही हूँ। गोरांगिनी को ले जाते समय मानो करुणा का समुद्र उमड़ आया, परन्तु लालमणि इसे भी खेल समझ उछलता–कूदता रहा। यदि दीर्घ – निःश्वास का शब्दों में अनुवाद हो सके, तो उसकी प्रतिध्वनि कहेगी, 'आह, मेरा गोपालक देश!'

कठिन शब्दार्थ

वयः सन्धि	–	जवानी एवं लड़कपन के बीच की उम्र।
गोवत्सा	–	बछिया।
कुक्कुट	–	मुर्गा।
संक्रामक रोग	–	छूत से फैलने वाला रोग।
सुडौल	–	सुन्दर आकार।
चामर	–	चँवर।
ओप देना	–	शोभा बढ़ाना, चमकाना।
मन्थर गति	–	धीमी गति।
समीर	–	वायु।
साहचर्यजनित	–	संपर्क से उत्पन्न।
आश्वस्त	–	भरोसा देना।

आकुलता	–	व्याकुलता, बैचेनी।
श्वेत	–	सफेद।
वलय	–	घेरा।
कृतज्ञता	–	उपकार मानने का भाव।
ज्ञापन	–	जताना/बताना।
उत्तरोत्तर	–	लगातार, अनवरत।
उद्घाटित	–	प्रकट करना।
अन्तर्धान	–	लुप्त, गायब होना।
व्याधि	–	रोग।
मर्मव्यथा	–	मन की पीड़ा।
पयस्विनी	–	दूध देने वाली गाय।
निश्चेष्ट	–	अचेत, मूर्छित।
निष्प्रभ	–	चमक या आभा रहित।
मरणासन्न	–	जिसकी मृत्यु समीप हो।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. महादेवी वर्मा किस युग की कवयित्री हैं ?
   (क) द्विवेदी युग (ख) छायावाद (ग) प्रगतिवाद (घ) प्रयोगवाद
2. गौरा के बछड़े का क्या नाम था?
   (क) लालमणि (ख) गोपालक (ग) समीर (घ) प्रियदर्शन

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. लेखिका की बहन का नाम क्या है ?
4. 'गाय करुणा की कविता है' किसका कथन है ?
5. लेखिका को गाय पालने का सुझाव किसने दिया ?
6. गौरा के बछड़े (वत्स) का क्या नाम रखा गया ?
7. गौरा की बीमारी का क्या कारण था ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

8. कौनसी समस्या स्थायी समाधान चाहती थी ? उसका क्या समाधान हुआ ?
9. "आह मेरा गोपालक देश" पंक्ति में निहित वेदना को स्पष्ट कीजिए।
10. गौरा का लेखिका के बंगले पर हुए स्वागत का वर्णन कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न –

11. 'गौरा वास्तव में बहुत प्रियदर्शनी थी' पंक्ति के आधार पर गौरा के शारीरिक सौन्दर्य एवं स्वभावगत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
12. 'गौरा की मृत्यु का संघर्ष' इस संस्मरण का सर्वाधिक मार्मिक प्रसंग है' स्पष्ट कीजिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

    (क) गाय के नेत्रों में हिरन के नेत्रों .... उसकी आँखें देखकर ही समझ में आ सकता है।

    (ख) अपने पालित जीव–जन्म के पार्थिक ....उसकी प्रतिध्वनि कहेगी, 'आह, मेरा गोपालक देश!

17
रामबक्ष
(जन्म : 1951 ई.)

जीवन परिचय –

रामबक्ष का जन्म नागौर जिला के चिताणी गाँव में 4 सितम्बर 1951 ई. को हुआ। आरंभिक शिक्षा गाँव एवं आसपास के विद्यालयों में हुई। मैट्रिक से स्नातकोत्तर तक की शिक्षा जोधपुर में पूरी हुई। पीएच.डी. जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय से करने के बाद ये रोहतक, जोधपुर, इग्नु विश्वविद्यालयों में अध्यापन कार्य करते रहे। सम्प्रति जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भाषा संस्थान में प्रोफेसर पद पर कार्यरत हैं।

इनकी कुछ चर्चित पुस्तकें – 'प्रेमचन्द', 'प्रेमचन्द और भारतीय किसान', 'दादूदयाल', समकालीन हिंदी आलोचक और आलोचना' हैं।

पाठ परिचय –

मध्यकाल भारतीय सनातनता का एक उज्ज्वल अध्याय है। संत–कवियों ने सार्वभौम मानवता के लिए एक सहज–सामान्य पथ की वकालत की। दादू की बानी सदियों से राजस्थान के जनमानस की सामूहिक स्मृति का हिस्सा रही हैं। कबीर के समान इनमें खण्डन–मण्डन की प्रवृत्ति नहीं मिलती। देशाटन से प्राप्त अनुभवों को दादू ने प्रेम के सरस धरातल पर मर्मस्पर्शिनी भावों के साथ परोस दिया है। लेखक ने इस आलेख में दादू दयाल की प्रासंगिता एवं उनके उपदेशों का जीवनीपरक मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

लोक संत दादू दयाल

शिरोमणि संत दादू दयाल का जन्म फागुन सुदी अष्टमी बृहस्पतिवार संवत् 1601 (सन् 1544 ई.) को हुआ माना जाता है। दादू के जन्म स्थान के बारे में विद्वान एक मत नहीं हैं। दादू पंथी भक्तों की मान्यता है कि वह एक छोटे–से बालक के रूप में, अहमदाबाद के निकट, साबरमती नदी में बहते हुए पाए गए। इनका लालन–पालन लोदीराम नामक नागर ब्राह्मण ने किया। इनकी माता का नाम बसीबाई था। जन्मभूमि के संबंध में विद्वानों में भले ही मतभेद रहे हों लेकिन इनकी साधना भूमि निश्चित रूप से राजस्थान है।

मध्यकालीन निर्गुण संत परंपरा के अधिकांश कवियों ने हिन्दू समाज के जात–पाँत की व्यवस्था से अपनी असहमति जतायी थी। दादू भी इसके अपवाद नहीं थे। कई बार स्वयं

इनके जिज्ञासु भक्त भी यह पूछ लेते थे कि महाराज, आपकी जाति क्या है? ऐसे जिज्ञासु भक्तों को संबोधित करते हुए दादू ने कहा –

दादू कुल हमारै केसवा, सगात सिरजनहार।
जाति हमारी जगतगुर, परमेस्वर परिवार।।
दादू एक सगा संसार में, जिन हम सिंरजे सोइ।
मनसा बाचा क्रमनां, और न दूजा कोई।।

यहाँ दादू ने अपनी विचार–प्रणाली को व्यक्त करते हुए कहा है कि मेरे सच्चे सम्बन्ध तो ईश्वर से हैं। और इसी सम्बन्ध से मेरा परिचय है। परिवार में बद्ध व्यक्ति अपने सगे–सम्बन्धियों के लिए छल–कपट करता है। उसके मन में अपने–पराये की भावना आ जाती है। दादू इसे संसार की 'माया' और संसार से 'मोह' की संज्ञा देते हैं। दादू अपने आपको इनसे मुक्त कर चुके थे, वह संसार में रहते हुए भी सांसारिक बंधनों को काट चुके थे। अतः निरर्थक जात–पाँत की लौकिक भाषा में अपना वास्तविक परिचय कैसे देते?

संतों ने अपनी रचनाओं में गुरु की महिमा का विस्तार से बखान किया है। अतः यह जानना भी हमारे लिए आवश्यक है कि इनके गुरु कौन थे? लेकिन इस तथ्य की प्रामाणिक जानकारी अनुपलब्ध है। जन गोपाल की ''श्री दादू जन्म लीला परची'' के अनुसार ग्यारह वर्ष की अवस्था में भगवान ने एक वृद्ध के रूप में दर्शन देकर इनसे एक पैसा माँगा। फिर इनसे प्रसन्न होकर इनके सिर पर हाथ रखा और इनके सारे शरीर पर स्पर्श करते हुए इनके मुख में ''सरस पान'' भी दिया। दादू पंथियों के अनुसार बुड्ढन नामक एक अज्ञात संत इनके गुरु थे। जन गोपाल के अनुसार बचपन के ग्यारह वर्ष तक बीत जाने के बाद, इनके बुड्ढे के रूप में गुरु के दर्शन हुए। दादू ने अपनी वाणी में गुरु की महिमा का गान तो बहुत किया है, लेकिन उनका कहीं नाम नहीं लिया है।

ऐसी मान्यता है कि वे अठारह वर्ष की अवस्था तक अहमदाबाद में रहे, छह वर्ष तक मध्य प्रदेश में घूमते रहे और बाद में सांभर (राजस्थान) में आकर बस गए। सांभर आने से पहले उन्होंने क्या किया था और कहाँ–कहाँ भ्रमण कर चुके थे, इसकी प्रामाणिक सूचना हमें नहीं मिलती। जन गोपाल की ''परची'' के अनुसार दादू तीस वर्ष की अवस्था में सांभर में आकर रहने लगे थे। सांभर–निवास के दिनों के बाद की उनकी गतिविधियों की थोड़ी–बहुत जानकारी मिलती है। सांभर के बाद वह कुछ दिनों तक आमेर (जयपुर के निकट) रहे। यहाँ पर अभी भी एक ''दादू द्वारा'' बना हुआ है। कुछ लोगों का कहना है, दादू ने फतेहपुर सीकरी में अकबर से भेंट की थी और चालीस दिनों तक आध्यात्मिक विषयों की चर्चा भी करते रहे थे। अन्य संतों की तरह दादू दयाल ने भी काफ़ी देश–भ्रमण किया था। विशेषकर उत्तर भारत (काशी), बिहार, बंगाल और राजस्थान के भीतरी भागों में लम्बी यात्राएँ की थीं। अन्त में, ये नराणा (राजस्थान) में रहने लगे, जहाँ उन्होंने अपनी इहलीला समाप्त की। दादू की इच्छानुसार उनके शरीर को भैराना की पहाड़ी पर स्थित एक गुफा में रखा गया जहाँ इन्हें

समाधि भी दी गई। इसी पहाड़ी को अब ''दादू खोल'' कहा जाता है, जहाँ उनकी स्मृति में अब भी मेला लगा करता है।

सांभर से ही दादू दयाल की भक्ति–साधना आरम्भ होती हैं। यहीं से उन्होंने उपदेश देने शुरू किए थे, और यहीं पर उन्होंने 'पर ब्रह्म सम्प्रदाय' की स्थापना की थी। जो दादू की मृत्यु के बाद 'दादू–पंथ' कहा जाने लगा। दादू ने अपनी रचनाओं में अपने परिवार और पारिवारिक स्थिति का जिक्र किया है। उन्होंने लिखा है –

दादू रोजी राम है, राजिक रिजक हमार।
दादू उस परसाद सौं, पोष्या सब परिवार।।

ऐसा लगता है कि किसी जिज्ञासु व्यक्ति ने दादू से सीधा सवाल पूछा था कि आपका खाना–पीना कैसे चलता है? आप अपने परिवार का भरण–पोषण कैसे करते हैं? अर्थात् आपकी आय के साधन क्या हैं? यहाँ तो चारों ओर अभाव ही अभाव दिखाई दे रहा है। इस जिज्ञासा को शांत करने के लिए दादू ने कहा कि राम ही मेरा रोज़गार है, वही मेरी सम्पत्ति है, उसी राम के प्रसाद से परिवार का पोषण हो रहा है। इन पंक्तियों से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि यहाँ ऐश्वर्य का बोलबाला नहीं, गरीबी का साम्राज्य है। यह बात यहाँ रेखांकित करने लायक है कि दादू को अपनी गरीबी से कोई शिकायत नहीं है, इसे सहज जीवन स्थिति मानकर उन्होंने स्वीकार कर लिया है। गरीबी की पीड़ा का बोध और उससे उत्पन्न आक्रोश दादू की रचनाओं में कहीं भी नहीं मिलता।

दादू के जीवन काल में ही उनके अनेक शिष्य बन चुके थे। उन्हें एक सूत्र में बाँधने के विचार से एक पृथक् सम्प्रदाय की स्थापना होनी चाहिए, यह विचार स्वयं दादू के मन में आ गया था। और इसलिए उन्होंने सांभर में 'पर ब्रह्म सम्प्रदाय' की स्थापना कर दी थी। दादू की मृत्यु के बाद उनके शिष्यों ने इस सम्प्रदाय को 'दादू–पंथ' कहना शुरू कर दिया। आरम्भ में इनके कुल एक सौ बावन शिष्य माने जाते रहे। इनके शिष्यों के थांभे प्रचलित हुए। इनके थांभे अब भी अधिकतर राजस्थान, पंजाब व हरियाणा में हैं। इस क्षेत्र में अनेक स्थानों पर दादू–द्वारों की स्थापना की गई थी। उनके शिष्यों में गरीबदास, बधना, रज्जब, सुन्दरदास आदि प्रसिद्ध हुए।

संत दादू दयाल के स्मारक रूप विशिष्ट स्थानों में सर्वप्रथम स्थान करडाला वा कल्याणपुर प्रसिद्ध हैं। जहाँ उन्होंने पहली बार काफ़ी समय तक साधना की थी। इस बात का परिचय दिलाने के लिए वहाँ उनकी एक 'भजन शिला', वर्तमान है। वहाँ पर पहाड़ी के नीचे की ओर एक दादू द्वारा भी बना दिया गया है जिसे, उसी कारण महत्त्व दिया जाता है। करडाला के अतिरिक्त सांभर में भी दादू जी की एक छतरी बनी हुई है, जो उनके रहने की पुरानी कुटिया का प्रतिनिधित्व करती है और पीछे वहाँ पर एक विशाल मंदिर भी बना दिया गया है। सांभर के अनन्तर अधिक समय तक उनके निवास करने का स्थान आमेर समझा जाता है, जहाँ पर एक सुन्दर दादू द्वारा निर्मित है। परन्तु इन सभी से अधिक महत्त्व नराणे को दिया जाता है, जहाँ पर अभी तक वह खेजड़े का वृक्ष भी दिखलाया जाता है, जहाँ वे

बैठा करते थे। उसी के समीप एक 'भुजनशाला' है तथा एक विशाल मन्दिर भी बना हुआ है। यहाँ का दादू द्वारा सर्वप्रमुख माना जाता है। दादू जी का शव, जहाँ उनका देहांत हो जाने पर, डाला दिया गया था, वह भराणे का स्थान भी उनके अन्तिम स्मारक के रूप में वर्तमान है। वहाँ पर भी एक चबूतरा बना दिया गया है और पूरा स्थान 'दादू खोल' के नाम से भी अभिहित किया जाता है। कहते हैं कि यहीं कहीं पर उनके कुछ बाल, तूँबा, चोला तथा खड़ाऊँ भी अभी तक सुरक्षित हैं। कल्याणपुर, साँभर, आमेर, नराणा व भैराणा 'पंचतीर्थ' भी माने जाते हैं।

उनके स्मारक के रूप में दो मेले भी लगा करते हैं। इनमें से एक नराणे में प्रति वर्ष फागुन सुदी पंचमी से लेकर एकादशी तक लगा करता है, जिनमें प्रायः सभी स्थानों के दादू पंथी इकट्ठे होते हैं। दूसरा मेला भैराणे में फागुन कृष्ण तृतीया से फागुन सुदी तृतीया तक चलता रहता है।

दादू ने अपने शिष्यों को उपदेश दिया की परनिंदा न किया करें। क्योंकि निंदा तो वह व्यक्ति करता है, जिसके हृदय में राम का निवास नहीं है। दादू को बड़ा आश्चर्य होता है कि लोग कैसे निस्संकोच रूप से दूसरे की निंदा कर देते हैं –

न्यंदत सब लोग विचारा, हमकौं भावे राम पियारा।।
नरसंसै त्रिदोष लगावै, ताथें मोकौं अचिरज आवे।।
दुवध्या दोइ पष रहताजे, तासनि कहत गये रे ये।।
निरवैरी निहकामी साध, तासिरि देत बहुत अपराध।।
लोहा कंचन एक समान, तासनि कहैं करत अभिमान।।
न्यंदा स्तुति एक करि तौले, तासौं कहै अपवाद हि बोलें।।
दादू निंदा ताकौं भावै, जाकै हिरदे राम न आवै।।

दादू इतने शांत स्वभाव के थे कि किसी विवाद में उलझे ही नहीं। निंदा–स्तुति को उन्होंने समभाव से ग्रहण कर लिया था। उनके शिष्य हिन्दू और मुसलमान दोनों थे। उन्होंने अपने आचरण और उपेश द्वारा पूरी मानवता के लिए एक समान पथ का आविष्कार किया। उन्होंने अपने विरोधियों से बहस कम की और समर्थकों को सलाह ज्यादा दी है।

विक्रम संवत् 1660 (सन् 1603 ई.) जेठ बदी अष्टमी शनिवार को इन्होंने अपनी इहलीला समाप्त की।

कठिन शब्दार्थ

जिज्ञासु	–	जानने की इच्छा रखने वाला
लौकिक	–	सांसारिक
सिरजनहार	–	निर्माण करने वाला
दूजा	–	दूसरा

इहलीला	–	इस लोक का जीवन
स्मारक	–	किसी के स्मृति–रक्षा के अभिप्राय से संस्थापित भवन
सुदी	–	शुक्ल पक्ष
बदी	–	कृष्ण पक्ष
कंचन	–	स्वर्ण
स्तुति	–	प्रशंसा

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. दादू का जन्म स्थान है :–
   (क) अहमदाबाद (ख) साँभर (ग) काशी (घ) नराणा
2. दादू के प्रसिद्ध शिष्य हैं –
   (क) गरीबदास (ख) रज्जब (ग) सुन्दरदास (घ) उपर्युक्त सभी

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. दादू का जन्म कहाँ हुआ?
4. दादू के माता–पिता का नाम क्या था?
5. दादू के गुरू का नाम क्या था?
6. दादूपंथ के पंचतीर्थ का नाम लिखें।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. दादू ने अपनी जाति क्या बताई थी?
8. दादू के गुरु परम्परा के बारे में क्या मान्यता है?
9. 'दादू खोल' से क्या आशय है?
10. दादू ने निन्दा–स्तुति के बारे में क्या कहा?

निबंधात्मक प्रश्न –

11. दादू ने अपने शिष्यों को क्या शिक्षा दी?
12. दादू के देशाटन एवं उनसे जुड़े पावन तीर्थों पर प्रकाश डालिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) दादू ने कहा राम ही मेरा रोजगार है................. कहीं नहीं मिलता।
    (ख) मेरे सच्चे सम्बन्ध .... कैसे देते?

18
लोक संत पीपा (संकलित)

पाठ परिचय –

राजस्थान के प्रमुख लोक संतों में गिने जाने वाले खींची चौहान राजवंश में जन्मे संत पीपा ने मध्यकालीन निर्गुण भक्ति काव्यधारा में अपना अमूल्य योगदान दिया है। राजपाट तक को त्यागकर तथा संपूर्ण वैभव को एक तरफ छोड़कर इन्होंने समाज सुधार और निर्गुण भक्ति साधना के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दिया। राजस्थान के लोक संत पीपा का जीवन चरित्र भारतीय समाज सुधारकों के लिए अद्भुत और अनुपम है। यही कारण है कि जीवमात्र की समानता के प्रबल पक्षधर लोकसंत पीपा आज भी हमारे हृदय में जीवित हैं।

लोक संत पीपा

राजस्थान के प्रख्यात लोक संत एवं भक्त कवि पीपा का जन्म वि.सं. 1390 के आसपास झालावाड़ जिले के गागरौन नामक स्थान पर हुआ माना जाता है। खींची चौहान राजवंश में जन्मे पीपा आकर्षक व्यक्तित्व के धनी युवा थे। युवावस्था में ही पिता की मृत्यु के उपरान्त राजगद्दी पर आसीन हो गागरौन का राजकाज इन्होंने सँभाल लिया। कुशल शासक और धीर गंभीर स्वभाव के कारण ये प्रजा के चहेते थे। अपने शासन काल में इन्होंने कई विजय प्राप्त कर अपना राज्य विस्तार किया। सांसारिकता को त्याग कर ये प्रभु भक्ति की ओर अग्रसर हुए तथा संत काव्य धारा में अभूतपूर्व योगदान देकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। मध्यकालीन भक्ति साहित्य में महान समाज सुधारक संत पीपा ने अपनी वाणी और विचारों से जहाँ एक ओर बाह्याडम्बरों का विरोध, रूढ़ि परम्पराओं का विरोध, दुर्व्यसनों का विरोध इत्यादि किया, वहीं दूसरी ओर निर्गुण निराकार परम ब्रह्म की भक्ति कर संत काव्य धारा में अपनी उपस्थिति से हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्यकाल को गौरवान्वित किया। ये एक ऐसे संत कवि थे जिन्होंने भक्ति और समाज सुधार का अद्भुत रूप सामने रखा है। कबीर की परम्परा का अनुसरण करते हुए इन्होंने कबीर की मान्यताओं को भक्ति–प्रतिष्ठा के लिए सार्थक बताया है। अपनी वाणी में संत कबीर को ये झूठी सांसारिकता और कलियुग की अंधविश्वासी रीतियों के खण्डन के रूप में प्रस्तुत करते हैं तथा कहते हैं कि कबीर न होते तो सच्ची भक्ति रसातल में पहुँच जाती :–

"जै कलि नाम कबीर न होते।
तौ लोक बेद अरु कलिजुग मिलि करि। भगति रसातलि देते।"

कहा जाता है कि पहले तो पीपा मूर्ति पूजक थे। देवी दुर्गा के उपासक थे। उस समय भारत में वैष्णवों का बहुत बोलबाला था। एक बार इनके राज्य में वैष्णव भक्त मण्डली आई जिसके मुखिया ने इन्हें परमात्मा के आगे शुद्ध हृदय से आराधना करने तथा काशी जाकर गुरु रामानन्द गुसाईं से मिलने की सलाह दी। यह सुनकर पीपा अपनी रानी सीता सहित काशी की तरफ चल पड़े। जब त्रिकालदर्शी स्वामी रामानन्द को पीपा के आने का समाचार मिला तो उन्होंने आश्रम का दरवाजा यह कहकर बंद करवा दिया कि 'हम गरीब हैं, राजाओं से हमारा क्या मेल'। पीपा ने उसी समय अपना सारा धन निर्धनों में बाँट दिया तथा लाव–लश्कर वापस गागरौन भेज दिया। तत्पश्चात् गुरू रामानन्द के पास आकर दंडवत चरण पकड़ निवेदन किया कि ''महाराज इस भवसागर से पार होने का साधन बताओ''। स्वामी रामानन्द ने 'राम' नाम सुमिरन की आज्ञा देकर कहा – "राम नाम का आँचल मत छोड़ना। 'राम' नाम ही सर्वोपरि है।" पीपा की सोई हुई आत्मा जाग उठी। रामानन्द जी से दीक्षा लेकर वे उनके शिष्य बन गए। पूर्ण उपदेश प्राप्त कर वे गागरौन वापस लौट आए। यहाँ आकर उनकी दिनचर्या ही परिवर्तित हो गई। दिन–रात हरि–सुमिरन में समय व्यतीत होने लगा। राजकाज से मन उचट गया। राजपाट को वे अहंकार और भय का कारण मानने लगे। एक दिन ऐसा भी आया जब वे सब कुछ त्याग कर वैराग्य धारण कर प्रभु भक्ति में लीन हो गए। यह संसार और शरीर उन्हें मिथ्या लगने लगा। आत्मा और परमात्मा को एक मानते हुए सच्चे गुरू के बताए मार्ग पर वे चले पड़े –

"जो ब्रह्मण्डे सोई पिण्डे, जो खोजै सो पावै।
पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरू होई लखावै।''

संत पीपा जब उपदेश दिया करते थे तो उनके भक्तों की भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। वे वाणी का पाठ भी किया करते थे। वे मानते थे कि "यह जो पंचतत्व शरीर है, यही प्रभु है। भाव शरीर में जो आत्मा है वही परमात्मा है। साधु संतों का घर भी शरीर है। पंडित देवताओं की पूजा करते हैं किन्तु पूजन की सब सामग्री शरीर में है। सब कुछ तन में है। सतगुरू की कृपा होने पर सब कुछ इस तन से प्राप्त हो सकता है" –

''कायउ देवा काइयउ देवल काइयउ जंगम जाती।
काइयउ धूप दीप नहीं बेदा काइयउ पूजऊ पाती।।"

सच्चे गुरु के प्रभाव से ही सांसारिक मनुष्य मोह माया को त्यागकर भवसागर को पार कर सकता है। गुरु रामानन्द को ही वे श्रेय देते हैं जिन्होंने पीपा को लोहे से स्वर्ण में परिवर्तित कर दिया तथा अपनी चरण रज देकर संसार के फँदे को काट दिया –

"लोह पलट कंचन कियो सतगुरु रामानन्द
पीपा पद रज है सदा, मिट्यो जगत को फंद।"

पीपा की मान्यता थी कि समाज में कोई छोटा बड़ा नहीं है। सब एक ही ईश्वर के बन्दे हैं। ईश्वर के सामने सभी जीव समान हैं। परमपिता परमात्मा अपनी संतान में कभी भेदभाव नहीं करता। उसकी दृष्टि में कोई ब्राह्मण और कोई शूद्र नहीं हैः–

"एकै मारग तें सब आया। एकै मारग जाही।।
एकौ माता पिता सबही के। विप्र छुद्र कोई नाहीं।।"

पीपा जी के इन्हीं उपदेशों के प्रभाव से कृष्ण की अनन्य भक्त मीराबाई भी प्रभावित हुई थीं। पीपा के भक्तिभाव और समर्पण से ही प्रभावित होकर वे उनसे मिलने पहुँची थीं। मीरा ने अपनी पदावली में पीपा से अपने मिलने का संकेत भी दिया है :–

"पीपा को प्रभु परचो दीन्हो दियो रे खजानो पूरि।"

पीपा ने अपनी भक्ति भावना द्वारा समाज के उपेक्षित वर्ग के हृदय में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, हिम्मत, दृढ़ निश्चय जाग्रत करते हुए समाज के रूढ़ि बंधनों को तोड़ने की चेतना का भाव जगाया। राजा होते हुए भी अपना सम्पूर्ण वैभव त्यागकर समाज सुधार और निर्गुण भक्ति साधना के प्रति उन्होंने अपना जीवन लगा दिया। यह उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है।

लोक संत के रूप में पीपा इसलिए भी अतिप्रिय थे क्योंकि वे हिंसा के घोर विरोधी थे। माँस भक्षण की वे सर्वथा निन्दा करते हैं। माँसाहार को वे वर्जित मानते हैं :–

"जीव मार जीमण करै, खाता करै बखाण।
पीपा परतख देख ले, थाली मांहि मसाण।"

संत पीपा ने इसी प्रकार उपदेश करते हुए भ्रमण किया। जहाँ–जहाँ वे जाते उनके भक्तों और अनुयायियों की संख्या बढ़ती जाती। जिस किसी को भी पता चलता कि पीपा राजगद्दी त्यागकर भक्त बने हैं तो भीड़ की भीड़ उनके दर्शन करने आ जाती। बड़े–बड़े राजा, नवाब, धनिक, आदि उनके उपदेश सुनते। पीपा जी निर्गुण निराकार ब्रह्म का उपदेश देते और मूर्ति पूजा का खण्डन करते।

राजस्थान के लोक संत पीपा का जीवन चरित्र भारतीय समाज सुधारकों के लिए अद्भुत और अनुपम है। यही कारण है कि उनकी कर्मशीलता और भक्तिनिष्ठता लोकवाणी का विषय भी बनी। वर्तमान में भी संत पीपा राजस्थानी लोकगीतों में विराजमान हैं। उनकी वाणी अमर हो गई है। उनकी अटूट–भक्ति ने राजस्थान में समाज सुधार की चेतना को विकसित किया है। आहू और कालीसिंध नदियों के संगम स्थल पर बना प्राचीन जल दुर्ग उनका जन्म स्थल तथा शासन स्थल रहा है। यहीं उनकी भक्ति साधना की गहन गुफा, समाधि स्थल तथा विशाल मंदिर एवं आश्रम विद्यमान है। माना जाता है कि वि.स. 1470 में इनका देवलोकगमन हुआ, परंतु जीवमात्र की समानता के प्रबल पक्षधर लोकसंत पीपा आज भी हमारे हृदय में जीवित हैं।

कठिन शब्दार्थ

बाह्याडम्बर	–	उपासना के बाहरी आडम्बर
दुर्व्यसन	–	बुरी आदतें
निर्गुण	–	गुणातीत
निराकार	–	आकाररहित
रसातल	–	पूरी तरह से नष्ट करना
वैष्णव	–	विष्णु के उपासक
त्रिकालदर्शी	–	तीनों लोको की बात जानने वाला
भव सागर	–	संसार रूपी सागर
पंचतत्व	–	पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश
रज	–	धूल
दुर्ग	–	किला

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. पीपा निम्नलिखित में से किस काव्यधारा से संबंधित हैं :–

   (क) सूफी काव्यधारा (ख) संत काव्यधारा

   (ग) राम भक्ति काव्यधारा (ग) कृष्ण भक्ति काव्यधारा

2. पीपा ने किस कवि की परम्परा का अनुसरण किया :–

   (क) सूरदास (ख) मलिक मुहम्मद जायसी

   (ग) तुलसी (घ) कबीर

3. पीपा से मिलने का संकेत किसने अपने काव्य में किया है :–

   (क) सूरदास (ख) मीराबाई

   (ग) कबीर (घ) रामानन्द

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न -

1. संत पीपा का जन्म कब एवं कहाँ हुआ?
2. पीपा की पत्नी का नाम क्या था?
3. पीपा के आने पर स्वामी रामानन्द ने आश्रम का दरवाजा बंद क्यों करवा दिया?
4. संत पीपा का मन राजकाज से क्यों उचट गया?

लघुत्तरात्मक प्रश्न -

5. संत पीपा की भक्ति पद्धति पर टिप्पणी लिखिए?
6. संत पीपा के परमात्मा के स्वरूप संबंधी विचारों को बताइए?
7. पीपा ने अपनी भक्ति भावना द्वारा समाज के उपेक्षित वर्ग को किस प्रकार दृढ़ बनाया?

निबंधात्मक प्रश्न -

8. लोक संत पीपा के जीवन चरित्र पर संक्षेप में प्रकाश डालिए?
9. संत पीपा का चरित्र चित्रण कीजिए?
10. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए-

    (क) जब त्रिकालदर्शी ---------------------- साधन बताओ।

    (ख) पीपा ने अपनी भक्ति भावना -------------------- बड़ी विशेषता है।

19
सड़क सुरक्षा

कर्त्तव्य

1. दुर्घटना स्थल से बचकर निकलने की जगह, उन्हें घायल लोगों की सहायता करने के लिए प्रेरित करना।
2. गलत जगह पर गाड़ी पार्क करना, शराब पीकर गाड़ी चलाना, मोबाइल पर बातें करना–इन गलत बातों के परिणामों पर अपने घर, पड़ोस तथा अन्य लोगों के साथ बातचीत करना।
3. सड़क पर क्रोध का प्रदर्शन तथा लोगों के साथ दुर्व्यवहार न करना। ऐसी स्थिति में अपने ऊपर तथा परिवार के सदस्यों पर नियंत्रण रखना।
4. सड़क सुरक्षा के नियमों और विनियमों का पालन न करने से क्या दण्ड मिल सकता है, इस पर चर्चा करना।
5. जब तक गाड़ी चलाने का लाइसेंस न मिले, गाड़ी न चलाना।
6. गाड़ी की नम्बर प्लेट का, दिए गए निर्देशानुसार होना।
7. अलग–अलग स्थितियों में कैसे गाड़ी चलानी चाहिए–वर्षा में, कुहरे में, रात में आदि का प्रशिक्षण प्राप्त करना।
8. लोगों को गाड़ी की गति नापने की मशीन, साँस द्वारा शराब की मात्रा की जाँच करने वाली मशीन, रेड स्पीड कैमरा, रिफलेक्टर तथा इन्टर–सेप्टर के विषय में जानकारी देना।
9. नशीले पदार्थों के सेवन से सड़क दुर्घटनाओं के दुष्परिणामों के बारे में बताना।
10. गाड़ी चलाते समय उसमें गाड़ी के रजिस्ट्रेशन, बीमा, प्रदूषण नियंत्रण से संबंधित कागज़ात होना।
11. दुर्घटना के समय उचित प्राथमिक चिकित्सा देने के विषय में बातचीत करना।

कहानी

राजू फटी आँखों से उस पन्ने को देख रहा था जो एक अन्तर्देशीय लिफाफे पर लिखा गया था। राजू के बड़े भाई निखिल की आँखों से आँसुओं की धार बह रही थी। उसने ही यह पत्र राजू को पढ़ने के लिए दिया।

प्रिय बेटा निखिल,

मैं जतिन गाँधी का अभागा पिता तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूँ। तुमने मेरे बेटे के मृत शरीर को सुरक्षित भिजवा दिया, उसके लिए मैं तुम्हारा आभारी हूँ। जतिन मेरा इकलौता बेटा था। मैं पोस्ट ऑफिस में क्लर्क की नौकरी करता था। मैं और मेरी पत्नी अपना पेट काटकर जतिन की पढ़ाई की फीस भरते थे। वह इन्जीनियर बनकर हमारे जीवन का आधार और बुढ़ापे का सहारा बनना चाहता था। हम उसके लौटने की प्रतीक्षा कर रहे थे। वह आया अवश्य, परन्तु कफ़न में लिपटकर। हमारा सहारा बनने की जगह हमें उसकी अर्थी को कंधा देना पड़ा। विधि का यही विधान था। हम लोग उसके निधन पर आँसू बहाने के सिवाय कर ही क्या सकते थे।

बेटा! जतिन तुम्हारी बातें हर पत्र में लिखता था। वह तुम्हें बहुत मानता था। मुझ बूढ़े पर एक अहसान कर सकोगे ? क्या तुम कुछ दिनों के लिए हमारे गाँव आ सकते हो ? मैं और जतिन की माँ तुम्हारे साथ बैठकर अपने बेटे के बारे में बातें करना चाहते हैं। पैसों की तंगी के कारण वह दो वर्षों से घर भी नहीं आया। अब वह कैसा लगता था ? क्या हमारे बारे में तुम से बातें करता था ? तुम्हें हमारा आशीर्वाद।

तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा में,
वेलू गाँधी

राजू ने पत्र पढ़कर निखिल की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा। निखिल ने उसे भयंकर रात की घटना सुनाई जिसने उसके जीवन को झकझोर के रख दिया। निखिल और उसके तीन मित्र होस्टल में आस–पास के कमरों में रहते थे। जतिन उनमें सबसे छोटा था। उनकी इन्जीनियरिंग की पढ़ाई का आखिरी वर्ष था। कुछ ही महीनों में वे घर वापिस लौट जाते और अच्छी नौकरियाँ पाकर जीवन में आगे बढ़ते। 31 दिसम्बर की शाम थी। इन चारों ने नए वर्ष के स्वागत की पार्टी में जाने का निश्चय किया। निखिल को अपना प्रोजेक्ट पूरा करना था, इसलिए उसने जाने से मना कर दिया। उसकी जगह पास वाले कमरे में रहने

वाले नरेन्द्र ने उनको अपनी गाड़ी में ले जाने का सुझाव दिया। पार्टी में काफी चहल–पहल थी। इन मित्रों में से किसी को भी शराब पीने का शौक नहीं था। परन्तु जैसा कि इस उम्र के युवाओं में आदत होती है, कुछ लोगों ने उन्हें ज़बरदस्ती शराब पिला दी थी। रात के दो बजे उन लोगों ने वापस जाने का निश्चय किया। बाहर चारों तरफ कोहरा छाया हुआ था। नरेन्द्र गाड़ी चला रहा था। हेड लाइट जला कर भी उसे ज्यादा कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। पार्टी में जोर से शोर मचाकर नाचने से बाकी लोग अपनी आँखें बंद करके सो गए। नरेन्द्र की आँखों में भी नींद भरी हुई थी। अचानक गाड़ी जाकर फ्लाई ओवर के खम्बे से टकराई। नरेन्द्र के अलावा बाकी तीनों की उसी समय मृत्यु हो गई और नरेन्द्र की कई हड्डियाँ टूट गई। सारा शरीर काँपने लगा। मृतकों को पहचानकर उनके माता–पिता को खबर देना और उन शवों को शवगृह में रखवाना, इन सभी बातों ने निखिल को शारीरिक और मानसिक रूप से हिलाकर रख दिया। कल तक जिन मित्रों के साथ वह अपने जीवन के सुख–दुख बाँटता था, आज बिना आवाज़ किए, प्राणहीन थे। उनके माता–पिता की हृदय विदारक चीखें उसे रातभर जगा कर रखती थीं। और अब यह पत्र! आखिर कैसे खड़ा होगा वह, वेलू गाँधी के सामने ?

अनिवार्य यातायात संकेत

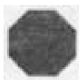				
रूक जाओ	रास्ता दो	सीधे प्रवेश निषिद्ध है।	एक ही रास्ता संकेत	एक ही रास्ता संकेत
दोनों वाहन दिशा में निषिद्ध	सभी मोटर वाहनों पर प्रतिबंध	ट्रक पर प्रतिबंध	बैलगाड़ी पर प्रतिबंध	तांगा पर प्रतिबंध
हाथ गाड़ी पर	साइकिल पर	पैदल चलने	दाहिने मोड़ पर	बाएँ मोड़ पर

प्रतिबंध	प्रतिबंध	वालों पर प्रतिबंध	प्रतिबंध	प्रतिबंध
U मोड़ पर प्रतिबंध है।	ओवर टेकिंग पर प्रतिबंध है।	हॉर्न पर प्रतिबंध	बैलगाड़ी और हाथ गाड़ी पर प्रतिबंध है।	लम्बाई सीमा
				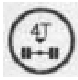
गति सीमा	लोड सीमा	ऊँचाई सीमा	चौड़ाई सीमा	एक्सल लोड सीमा
		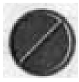	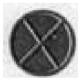	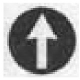
वाहन के बीच दूरी है।	संकेत प्रतिबंध समाप्त होता है।	नो पार्किंग	खड़े या रोके नहीं	आगे ही अनिवार्य है।
			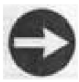	
बाएँ रखना अनिवार्य है।	दाहिने रखना अनिवार्य है।	बाएँ मोड़ना अनिवार्य है।	दाहिने मोड़ना अनिवार्य है।	आगे की ओर दाहिने मोड़ना अनिवार्य है।
आगे की और बाएँ मोड़ना अनिवार्य है।	आगे की ओर या बाएँ मोड़ना अनिवार्य है।	आगे की ओर या दाएँ मोड़ना अनिवार्य है।	साइकिल ट्रेक पर अनिवार्य है।	ध्वनि अनिवार्य है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. वेलू गाँधी ने किसे पत्र लिखा?
   (क) जतिन को (ख) निखिल को (ग) राजू को (घ) नरेन्द्र को
2. गाड़ी कौन चला रहा था?
   (क) निखिल (ख) जतिन (ग) वेलू गाँधी (घ) नरेन्द्र

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

3. जतिन किस चीज की पढ़ाई कर रहा था?
4. सभी साथी किस अवसर पर पार्टी कर रहे थे?
5. शराब पीकर कौन गाड़ी चला रहा था?
6. गाड़ी किससे टकरायी?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

7. राजू किसके पत्र को पढ़ रहा था?
8. जतिन के माता–पिता ने उसका पालन–पोषण कैसे किया था?
9. कहानी में हुई दुर्घटना का क्या कारण था?
10. इस कहानी से मिलने वाली शिक्षा को अपने शब्दों में लिखें।

निबंधात्मक प्रश्न –

11. नशीले पदार्थ अथवा शराब के सेवन करने के दुष्परिणामों पर टिप्पणी कीजिए।
12. ''सड़क सुरक्षा का उत्तरदायित्व नागरिकों पर है या सरकार पर'' इस विषय पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
13. निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –
    (क) कल तक जिन मित्रों के.............................. रातभर जगा कर रखती थीं।
    (ख) हम उसके लौटने की प्रतीक्षा.............................विधि का यही विधान था।